दृष्टि The Vision

एडिटोरियल

(संग्रह)

अप्रैल भाग-2
2021

दृष्टि, 641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
फोन: 8750187501
ई-मेल: online@groupdrishti.com

अनुक्रम

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम **5**

- अंबेडकर के मूल्य एवं विरासत 5
- भारत निर्वाचन आयोग: कितना स्वतंत्र एवं प्रभावी ? 6
- अध्यादेशों का पुन: प्रवर्तन 8
- कोविड-19: टीकाकरण की स्थिति 9
- न्यायपालिका: समस्याएँ एवं समाधान 10

आर्थिक घटनाक्रम **13**

- ग्रीन हाइड्रोजन: नवीकरणीय ऊर्जा का बेहतर विकल्प 14
- MSME में लघु उद्योग की स्थिति 16
- वित्तीय समावेशन में महिलाएँ 17

नोट :

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम **19**

- बांग्लादेश मुक्ति युद्ध, 1971 19

पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण **21**

- जीवनदायी नदी गंगा: प्रदूषण एवं संरक्षण 21

सामाजिक न्याय **23**

- नारीवादी विदेश नीति 23
- सार्वभौमिक सामाजिक सुरक्षा 24

नोट :

नोट :

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम

अंबेडकर के मूल्य एवं विरासत

हाल ही में भारत ने बी. आर. अंबेडकर की 130वीं जयंती मनाई। एक समाज सुधारक, भारतीय संविधान सभा के प्रारूप समिति के अध्यक्ष और देश के प्रथम कानून मंत्री के रूप में उनकी भूमिका सर्वविदित है।

हालाँकि, बी.आर. अंबेडकर की कई ऐसी विशेषताओं के बारे में सार्वजनिक रूप से कम जानकारी है जिन्होनें राष्ट्र निर्माण में मदद की तथा वर्तमान भारतीय सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक परिदृश्य में भी बेहद प्रासंगिक हैं।

भारत आज़ादी के 75 साल पूरे होने के उपलक्ष्य में "आज़ादी का अमृत महोत्सव" मनाने वाला है। इस मौके पर भारत निर्माण में बी.आर. अंबेडकर द्वारा निभाई गई भूमिका को याद रखना अनिवार्य है।

राष्ट्र निर्माण में बी.आर. अंबेडकर की भूमिका

- भारतीय संविधान के जनक: कानून के क्षेत्र में बी.आर. अंबेडकर की विशेषज्ञता और विभिन्न देशों के संविधान का ज्ञान भारतीय संविधान के निर्माण में बहुत मददगार साबित हुआ। वह संविधान सभा की प्रारूप समिति के अध्यक्ष बने और भारतीय संविधान के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- न्यायपूर्ण समाज का निर्माण: संविधान की प्रारूप समिति के अध्यक्ष के रूप में उन्होंने स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के माध्यम से न्यायपूर्ण समाज के निर्माण के लिये उपाय किये।
  - उनके अनुसार, भारतीय समाज जोकि जाति, धर्म, भाषा और अन्य कारकों के आधार पर विभाजित है के लिये एक सामान्य नैतिक मानदंड आवश्यक है एवं संविधान उस मानदंड की भूमिका निभा सकता है।
  - इसके अलावा उन्होंने, पूना पैक्ट के अंतर्गत सार्वजनिक सेवाओं में सामाजिक रूप से वंचित वर्गों के उचित प्रतिनिधित्व का आश्वासन दिया एवं उनके उत्थान के लिये शैक्षिक अनुदान के एक हिस्से को इन वर्गों के लिये सुरक्षित किया।
  - सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार का पक्षधर होने के साथ उन्होंने यह भी सुनिश्चित किया कि स्वतंत्रता के तुरंत पश्चात महिलाओं को भी वोट देने का अधिकार प्राप्त हो।
- प्रतिष्ठित अर्थशास्त्री: भारतीय रिज़र्व बैंक की परिकल्पना हिल्टन यंग कमीशन की सिफारिश पर की गई थी, जो अंबेडकर के लेख "रुपए की समस्या: इसका मूल एवं समाधान" में दिये गए दिशा-निर्देशों से प्रेरित था।
- एकीकृत जल संसाधन प्रबंधन में भूमिका: उनकी दूरदर्शिता ने दामोदर नदी घाटी परियोजना, सोन नदी घाटी परियोजना, महानदी (हीराकुंड परियोजना) आदि, जैसी नदी घाटी परियोजनाओं की स्थापना के माध्यम से केंद्रीय जल आयोग और एकीकृत जल संसाधन प्रबंधन की स्थापना में मदद की।
  - अंतर-राज्य जल विवाद अधिनियम, 1956 और नदी बोर्ड अधिनियम, 1956 भी उनकी सोच का परिणाम है।
- मज़दूरों के नेता: अम्बेडकर हर मंच पर वंचित वर्गों की आवाज़ थे। गोलमेज सम्मेलन में वंचित वर्गों के प्रतिनिधि के रूप में उन्होंने श्रमिकों और किसानों की स्थिति में सुधार पर चर्चा की।
  - इसके अलावा बॉम्बे असेंबली के सदस्य के रूप में, अंबेडकर ने कर्मचारियों के हड़ताल के अधिकार को समाप्त करने के कारण औद्योगिक विवाद विधेयक, 1937 का विरोध किया। वो 'कार्य करने की बेहतर स्थिति' के स्थान पर 'श्रमिकों के जीवन की उचित स्थिति' की वकालत करते थे। इसके साथ उन्होंने सरकार की श्रम नीति की बुनियादी संरचना तैयार की।
- भारत की कृषि समस्या के लिये विज़न: उनके निबंध का शीर्षक 'भारत में छोटी जोत और उनका समाधान' (1918) ने भारत की कृषि समस्या के समाधान के रूप में उन्होंने औद्योगिकीकरण का प्रस्ताव दिया। वर्तमान में भी इस पर बहस जारी है।

नोट :

- लैंगिक समानता सुनिश्चित करने में भूमिका: उन्होंने कार्य के घंटों में कमी कर प्रति सप्ताह 48 घंटे कार्य करने करने का प्रावधान किया। उन्होंने कोयले की भूमिगत खानों में महिलाओं के कार्य करने पर लगे प्रतिबंध को हटा दिया, ओवरटाइम, सशुल्क अवकाश और न्यूनतम मज़दूरी का प्रावधान पेश किया।
  - उन्होंने मातृत्व लाभ के साथ बिना लैंगिक पक्षपात के "समान काम के लिये समान वेतन" के सिद्धांत को स्थापित करने में मदद की।
  - हिंदू कोड बिल के संदर्भ में उनका समर्थन महिलाओं को एडॉप्ट करने और विरासत में हिस्सा प्राप्त करने का अधिकार प्रदान करने की दिशा में एक क्रांतिकारी कदम था।

वर्तमान में अंबेडकर की प्रासंगिकता

- स्थायी जातिगत असमानताएँ: भारत में जातिगत असमानता अभी भी कायम है। यद्यपि दलितों ने आरक्षण जैसी सकारात्मक कार्रवाई के माध्यम से तथा अपने स्वयं के राजनीतिक दलों के गठन के माध्यम से एक राजनीतिक पहचान हासिल की है तथापि उनके पास सामाजिक (स्वास्थ्य और शिक्षा) और आर्थिक मोर्चे पर कमियाँ हैं।
- वर्तमान सांप्रदायिकता की समस्या: राजनीति में अब सांप्रदायिक ध्रुवीकरण और सांप्रदायिकता का उदय हुआ है अत: यह आवश्यक है कि भारतीय संविधान में स्थायी क्षति से बचने के लिये अंबेडकर की संवैधानिक नैतिकता को धार्मिक नैतिकता के ऊपर रखा जाए।
  - बाबासाहेब अंबेडकर के अनुसार, संवैधानिक नैतिकता का अर्थ विभिन्न वर्गों एवं प्रशासनिक समूहों के परस्पर विरोधी हितों के बीच प्रभावी समन्वय का होना है।
- जनता के हित में नीतियों का निर्माण: अंबेडकर की सोच एवं उनकी विरासत भारत सरकार द्वारा जनता एवं गरीबों हेतु चलाए जा रहे कल्याणकारी योजनाओं और कार्यक्रमों में परिलक्षित होती हैं।
  - उदाहरण के लिये, ऋण प्राप्त करने के लिये मुद्रा योजना, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय में उद्यमशीलता को बढ़ावा देने के लिये स्टैंड-अप इंडिया, आयुष्मान भारत योजना, दीन दयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति योजना, सरकार के कई उपायों में श्रम कानूनों का सरलीकरण शामिल हैं, जो सरकार द्वारा बी.आर. अंबेडकर के सपनों को पूरा करने की अटूट प्रतिबद्धता को प्रदर्शित करते हैं।

निष्कर्ष

पंचतीर्थ - जन्मभूमि (महू), शिक्षा भूमि (लंदन), चैत्य भूमि (मुंबई), दीक्षाभूमि (नागपुर), महापरिनिर्वाण भूमि (दिल्ली) का विकास - राष्ट्रवादी सुधारक अंबेडकर के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के लिये एक उचित कदम है।

हालाँकि, आज भारत कई सामाजिक-आर्थिक चुनौतियों का सामना कर रहा है जैसे कि जातिवाद, सांप्रदायिकता, अलगाववाद, लैंगिक असमानता आदि। हमें अपने भीतर अंबेडकर की शिक्षा को खोजने की आवश्यकता है ताकि हम इन चुनौतियों से निपट सकें।

भारत निर्वाचन आयोग: कितना स्वतंत्र एवं प्रभावी ?

भारत निर्वाचन आयोग एक संवैधानिक संस्था है। अनुच्छेद 324 के अनुसार, भारत के राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति संसद एवं राज्यों की विधानसभाओं के चुनावों का अधीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण भारत निर्वाचन आयोग के अधिकार क्षेत्र में आता है।

इस अनुच्छेद की व्याख्या कई बार न्यायालय एवं भारत निर्वाचन आयोग (Election Commission of India- ECI) के आदेशों द्वारा की जाती रही है। इन व्याखायों के अनुसार, ECI में निहित शक्ति प्रकृति में पूर्ण है। भारत में होने वाले चुनावों के मामले में इसके अधिकार असीमित है। हालाँकि, कई ऐसे मुद्दे और प्रावधान हैं, जो अस्पष्ट हैं एवं ECI के कामकाज को प्रभावित करते हैं।

ECI की शक्ति का स्रोत

- **संविधान:** ECI को संविधान के अनुच्छेद 324 के तहत शक्ति प्राप्त है।
- **सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय:** सर्वोच्च न्यायालय ने मोहिंदर सिंह गिल बनाम मुख्य चुनाव आयुक्त (1978) में कहा था कि अनुच्छेद 324 के तहत स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने का दायित्व ECI का है एवं इस कार्य को पूरा करने के लिये ECI सभी आवश्यक कदम उठा सकती है।

नोट :

- **आदर्श आचार संहिता:** ECI द्वारा जारी की जाने वाली आदर्श आचार संहिता (Model Code of Conduct- MCC) राजनीतिक दलों, उम्मीदवारों और सरकारों के लिये एक दिशा-निर्देश है, जिसका पालन उन्हें चुनाव के दौरान करना होता है। यह आचार संहिता राजनीतिक दलों के बीच आम सहमति पर आधारित है। वर्ष 1960 में केरल सरकार द्वारा विधानसभा चुनाव के लिये जारी किये गए आचार संहिता को इसकी पूर्वपीठिका कहा जा सकता है। बाद में ECI द्वारा इसे अपनाया गया एवं परिष्कृत किया गया। वर्ष 1991 के बाद इसे सख्ती से लागू किया गया।
- **ECI की स्वतंत्रता:** ECI की स्वतंत्रता को संविधान द्वारा संरक्षित किया गया है। मुख्य चुनाव आयुक्त को उसके पद से हटाए जाने का प्रावधान सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश को हटाए जाने वाले प्रावधान के समान है। साथ ही, नियुक्ति के पश्चात् उनकी सेवा की शर्तों को नकारात्मक रूप से परिवर्तित नहीं किया जा सकता है।

निर्वाचन आयोग की संरचना

- निर्वाचन आयोग में मूलत: केवल एक चुनाव आयुक्त का प्रावधान था, लेकिन राष्ट्रपति की एक अधिसूचना के ज़रिये 16 अक्तूबर, 1989 को इसे तीन सदस्यीय बना दिया गया।
- इसके बाद कुछ समय के लिये इसे एक सदस्यीय आयोग बना दिया गया और 1 अक्तूबर, 1993 को इसका तीन सदस्यीय आयोग वाला स्वरूप फिर से बहाल कर दिया गया, तब से निर्वाचन आयोग में एक मुख्य चुनाव आयुक्त और दो चुनाव आयुक्त होते हैं।
- निर्वाचन आयोग का सचिवालय नई दिल्ली में स्थित है।
- मुख्य निर्वाचन अधिकारी IAS रैंक का अधिकारी होता है, जिसकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है तथा अन्य निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति भी राष्ट्रपति ही करता है।
- इनका कार्यकाल 6 वर्ष या 65 वर्ष की आयु (दोनों में से जो भी पहले हो) तक होता है।
- इन्हें भारत के सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के समकक्ष दर्जा प्राप्त होता है और उनके समान ही वेतन एवं भत्ते मिलते हैं।
- मुख्य चुनाव आयुक्त को संसद द्वारा सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश को हटाने की प्रक्रिया के समान ही पद से हटाया जा सकता है।

ECI से संबंधित मुद्दे

- शक्तियों का अपरिभाषित होना: आदर्श आचार संहिता के अलावा ECI समय-समय पर उन मुद्दों पर दिशा-निर्देश, निर्देश एवं स्पष्टीकरण देता रहता है जो चुनाव के दौरान उठते हैं। इस संहिता में यह निहित नहीं है कि ECI क्या कर सकता है; इसमें केवल उम्मीदवारों, राजनीतिक दलों एवं सरकारों के लिये दिशा-निर्देश शामिल हैं। इस प्रकार ECI के पास चुनाव से जुड़ी शक्तियों की प्रकृति और विस्तार को लेकर भ्रम की स्थिति बनी रहती है।
- आदर्श आचार संहिता को लेकर कोई कानूनी प्रावधान नहीं: ज्ञातव्य है कि आदर्श आचार संहिता राजनीतिक दलों के बीच आम सहमति पर आधारित है। इसके लिये कोई भी कानूनी प्रावधान नहीं किया गया है। इसके पालन हेतु कोई वैधानिक व्यवस्था नहीं है और इसे निर्वाचन आयोग द्वारा केवल नैतिक एवं संवैधानिक अधिकारों के तहत लागू किया जाता है।

नोट: चुनाव चिह्न (आरक्षण और आवंटन) आदेश, 1968 के पैरा 16A के अनुसार, यदि कोई मान्यता प्राप्त राजनीतिक दल आदर्श आचार संहिता का पालन करने से मना करता है तो आयोग उसकी मान्यता निलंबित कर सकता है या वापस ले सकता है। इस पर कुछ बुद्धिजीवी तर्क देते हैं कि जब MCCकानूनी रूप से लागू नहीं है, तो ECI मान्यता को वापस लेने जैसी दंडात्मक कार्रवाई का सहारा कैसे ले सकता है।

- अधिकारियों का स्थानांतरण: राज्य सरकारों के अधीन ऐसे अधिकारी, जो चुनाव के दौरान ECI के कार्य से संबंधित होते हैं, का अचानक स्थानांतरण भी आयोग के कामकाज को बाधित करता है।
- मोहिंदर सिंह गिल मामले में, न्यायालय ने स्पष्ट कर दिया था कि ECI अनुच्छेद 324 से तभी शक्ति प्राप्त कर सकता है जब उस विशेष विषय से जुड़ा कोई अन्य कानून मौजूद न हो। (हालाँकि, अधिकारियों का स्थानांतरण इत्यादि संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत बनाए गए नियमों द्वारा नियंत्रित होता है तथा निर्वाचन आयोग अनुच्छेद 324 द्वारा प्राप्त शक्ति के तहत इसकी उपेक्षा नहीं कर सकता।)
- अन्य कानूनों के साथ टकराव: MCC की घोषणा के पश्चात मंत्री किसी भी रूप में वित्तीय अनुदान, जैसे- सड़कों के निर्माण, पेयजल सुविधाओं का प्रावधान या सरकार में किसी भी पद पर तदर्थ नियुक्ति आदि की घोषणा नहीं कर सकते हैं।

नोट :

- जबकि, जनप्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 123 (2) (b) के अनुसार, किसी भी सार्वजनिक नीति की घोषणा या कानूनी अधिकार के प्रयोग को मुक्त एवं निष्पक्ष चुनाव में हस्तक्षेप नहीं माना जाएगा। इसके अलावा, चुनाव की प्रक्रिया को बाधित करने वाले उम्मीदवारों को अयोग्य घोषित करने की शक्ति नहीं है। अधिक-से-अधिक यह संबंधित मामले को पंजीकृत करने के लिये निर्देश कर सकता है।

- साथ ही, चुनाव प्रचार के दौरान राजनेताओं के भड़काऊ या विभाजनकारी भाषणों से निपटने के लिये पर्याप्त अधिकार भी इसके पास नहीं हैं। इसी कारण वर्ष 2019 के आम चुनावों के दौरान में ECI ने सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष यह स्वीकार किया कि इसके पास पर्याप्त शक्तियाँ नहीं है।

निष्कर्ष

ECI ने कर्तव्य के प्रति प्रतिबद्धता से भारतीय जनमानस के बीच लोकतांत्रिक एवं संवैधानिक संस्थाओं के प्रति एक विश्वास पैदा किया है। यद्यपि कानूनी मापदंडों के अस्पष्ट क्षेत्रों में संशोधन किया जाने की आवश्यकता है ताकि ECI मुक्त और निष्पक्ष चुनावों के माध्यम से लोकतांत्रिक व्यवस्था को सुनिश्चित कर सके।

अध्यादेशों का पुन: प्रवर्तन

हाल ही में केंद्रीय सरकार ने 'राष्ट्रीय राजधानी और संबद्ध क्षेत्रों में वायु गुणवत्ता प्रबंधन आयोग अध्यादेश, 2020' को पुन: प्रख्यापित/ जारी (Repromulgation) किया। ज्ञातव्य है कि इस अध्यादेश में राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में वायु गुणवत्ता प्रबंधन हेतु एक आयोग की स्थापना का प्रावधान है। इस प्रकार संसद में पेश किये बिना कानून बनाने के लिये बार-बार अध्यादेश जारी करना कई प्रश्न खड़े करता है।

ऐतिहासिक रूप से 1950 के दशक में प्रति वर्ष औसतन 7.1 अध्यादेश जारी किये गए थे। हालाँकि 1990 के दशक में यह संख्या बढ़कर औसतन 19.6 प्रति वर्ष हो गई। पिछले कुछ वर्षों में अध्यादेशों की संख्या में उच्च वृद्धि देखी गई है (वर्ष 2019 एवं 2020 में क्रमश: 16 एवं 15)।

अध्यादेश की कल्पना मूल रूप से आपातकालीन प्रावधान के रूप में की गई थी। किंतु हाल के वर्षों में अध्यादेश के लगातार उपयोग से विधायिका की प्रासंगिकता एवं शक्ति के पृथक्करण के सिद्धांत पर प्रश्नचिह्न खड़ा होता है।

अध्यादेश से जुड़े संवैधानिक प्रावधान:

- संविधान के अनुच्छेद 123 के अनुसार, कार्यपालिका को यह अधिकार प्राप्त है कि कुछ विशेष परिस्थितियों में अध्यादेश जारी कर सकती है। अध्यादेश तभी जारी किया जा सकता है जब संसद (या राज्य विधायिका) के दोनों सदनों में से कोई एक सदन सत्र में नहीं हो एवं राष्ट्रपति इस बात से संतुष्ट हो कि तत्काल कार्रवाई करना आवश्यक है।
- हालाँकि संसद की कार्यवाही पुन: शुरू होने पर दोनों सदनों द्वारा छह सप्ताह की समय-सीमा में संबंधित अध्यादेश को पारित करना आवश्यक होता है। यदि दोनों ही सदन इसे खारिज करने के पक्ष में मतदान करते हैं अथवा राष्ट्रपति द्वारा इसे वापस ले लिया जाता है तो अध्यादेश समाप्त हो जाता है।
- यदि संसद कार्यवाही शुरू होने के बाद छह सप्ताह की समय-सीमा में स्थापित किये गए अध्यादेश को पारित नहीं करती है तो अध्यादेश स्वत: समाप्त हो जाएगा।
- अनुच्छेद 213 के तहत राज्य सरकारों के लिये भी इसी तरह के प्रावधान मौजूद हैं।

अध्यादेशों पर सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय:

- आरसी कूपर केस, 1970: आरसी कूपर बनाम यूनियन ऑफ इंडिया (वर्ष 1970) में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि राष्ट्रपति के अध्यादेश जारी करने के फैसले को इस आधार पर चुनौती दी जा सकती है कि 'तत्काल कार्रवाई' की आवश्यकता नहीं थी एवं अध्यादेश मुख्य रूप से सदन में बहस एवं चर्चा को बायपास करने के लिये जारी किया गया था।
- डीसी वाधवा केस, 1987: अध्यादेशों के लगातार प्रयोग के मुद्दे को फिर से एक याचिका के माध्यम से सर्वोच्च न्यायालय में लाया गया। यह याचिका बिहार में वर्ष 1967 एवं वर्ष 1981 के बीच 256 अध्यादेशों की घोषणा से संबंधित थी। इसमें 11 ऐसे अध्यादेश शामिल थे जिन्हें 10 से अधिक वर्षों तक प्रयोग में लाया जाता रहा, इस कारण उस समय बिहार 'अध्यादेश राज' के रूप में प्रसिद्ध था।

नोट :

- सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि कार्यपालिका द्वारा अध्यादेश जारी करने की शक्ति का प्रयोग असाधारण परिस्थितियों में किया जाना चाहिये न कि विधायिका की विधि बनाने की शक्ति के विकल्प के रूप में।

- कृष्ण कुमार सिंह केस, 2017: कृष्ण कुमार सिंह बनाम बिहार राज्य में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि अध्यादेशों को जारी करने का अधिकार प्रकृति में पूर्ण नहीं है, यह सशर्त है। यदि मौजूदा परिस्थितियों में तत्काल कार्रवाई करना आवश्यक है तभी इसका प्रयोग किया जाना चाहिये। अध्यादेशों का लगातार प्रयोग संविधान पर आस्था के प्रति धोखा है एवं लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं का अनुचित प्रयोग है।

अध्यादेश से संबंधित मुद्दे

- विधायी शक्ति का उपयोग: विधियों का निर्माण विधायिका का कार्य है। कार्यपालिका को यह शक्ति विशेष परिस्थितियों में तत्काल आवश्यकताओं के लिये प्रदान किया जाता है एवं इस प्रकार बनाए गए कानून की समाप्ति स्वत: तय होती है। कोई भी अध्यादेश दोनों सदनों की कार्यवाही शुरू होने के पश्चात् छह सप्ताह की समयसीमा तक ही लागू रहता है (यदि सदनों से समर्थन प्राप्त न हो तो) किंतु अध्यादेशों को पुन: आगे बढ़ाना इस समय सीमा को नज़रअंदाज करता है।
- शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का उल्लंघन: वर्ष 1973 के केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य में सर्वोच्च न्यायालय ने संविधान की "आधारभूत संरचना" के रूप में शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत को सूचीबद्ध किया।
  - अध्यादेश को संसद के सत्र में नहीं होने पर तात्कालिक कार्रवाई के लिये बनाया गया है, यह विधायिका का विकल्प नहीं है। हालाँकि अनुच्छेद 123 अध्यादेशों की कोई संख्यात्मक सीमा तय नहीं करता है।
  - इस तरह, अध्यादेशों का पुनर्संयोजन शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का उल्लंघन करता है, क्योंकि यह कार्यपालिका को विधायिका से विचार-विमर्श या अनुमोदन के बिना स्थायी रूप से विधि बनाने की अनुमति देता है।
- सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों को नजरअंदाज करना: अध्यादेशों के बारंबार उपयोग पर सख्त फैसले के बाद भी केंद्र और राज्य सरकार दोनों ने कई बार सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियों की अनदेखी की है।
  - उदाहरण के लिये वर्ष 2013 और वर्ष 2014 में प्रतिभूति कानून (संशोधन) अध्यादेश को तीन बार प्रख्यापित किया गया था। इसी प्रकार भूमि अधिग्रहण अधिनियम में संशोधन करने का अध्यादेश दिसंबर 2014 में जारी किया गया था एवं दो बार- अप्रैल और मई 2015 में पुन: प्रख्यापित किया गया।

निष्कर्ष

भारतीय संविधान ने विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच शक्तियों के पृथक्करण का प्रावधान किया है, जिसमें कानून बनाना विधायिका का कार्य है। कार्यकारी को आत्म-संयम दिखाना चाहिये और अध्यादेश बनाने का उपयोग केवल अप्रत्याशित या ज़रूरी मामलों में करना चाहिये।

कोविड-19: टीकाकरण की स्थिति

आठ महीने पूर्व जब भारत में कोविड-19 से संक्रमित मरीजों की औसत दैनिक संख्या में गिरावट होनी शुरू हुई तो विशेषज्ञों का मानना था कि भारत में कोविड-19 की दूसरी लहर नहीं दिखाई देगी। जबकि, कोविड की दूसरी लहर ने यहाँ की स्वास्थ्य संबंधी आधारभूत संरचना की सभी कमियों को उजागर कर दिया है।

इसके अलावा भारत में कोविड-19 संक्रमण के विस्तार को रोकना कठिन हो रहा है क्योंकि यहाँ पुन: लॉकडाउन लगाना देश को आर्थिक रूप से संवेदनशील स्थिति में पहुँचा सकता है। लोगों में कोविड के प्रति डर, सार्वजनिक दवाब एवं इस संक्रमण की भयावहता को देखते हुए केंद्र सरकार ने 18 वर्ष से अधिक आयु के व्यक्तियों को टीकाकरण के लिए पंजीकृत कराने हेतु अधिकृत किया है। साथ ही, राज्यों को खरीद पर अधिक नियंत्रण करने के लिए प्रोत्साहित करने की कोशिश की है।

हालाँकि ये कुछ सकारात्मक कदम हैं, इसके बावजूद इस बात की संभावना कम है कि इन उपायों से टीके के सार्वभौमीकरण में या यहाँ तक कि टीके की उपलब्धता में तेज़ी आएगी।

नोट :

टीके की त्वरित उपलब्धता से जुड़े कई मुद्दे निम्नलिखित हैं:

- टीके की कमी: यदि तीन मिलियन प्रतिदिन की दर से टीकों का वितरण किया जाए तब भी भारत के प्रत्येक व्यस्क को टीके की कम-से-कम एक खुराक मिलने में 260 दिनों का समय लगेगा।
  - टीकों की कमी के कारण भारत टीकाकरण हेतु एक सार्वभौमिक नीति नहीं बना सकता। इसे अधिक लक्ष्य केंद्रित बनाने की आवश्यकता है।
- वित्त की कमी: भारत में राज्यों के लिए इसकी संभावना कम है कि वो नीतिगत रूप से टीकों की आपूर्ति, खरीद एवं स्टॉक हेतु वित्त की पर्याप्त उपलब्धता सुनिश्चित कर पाएँगे।
- कच्चे माल की कमी: टीकों के निर्माण हेतु संयुक्त राज्य अमेरिका से आवश्यक कच्चे माल, बैग, शीशियाँ, सेल कल्चर मीडिया, एकल-उपयोग टयूबिंग, विशेष रसायनों, इत्यादि की आपूर्ति में रुकावट के कारण भी टीकों की उपलब्धता बाधित कर हो रही है। ज्ञातव्य है कि अब इन कच्चे माल को दूसरे देशों में निर्यात के लिए प्रतिबंधित कर दिया गया है।
- वैश्विक प्रतिबद्धताएँ : एक अन्य मुद्दा अंतर्राष्ट्रीय दायित्वों से संबंधित है। वैश्विक गठबंधन कार्यक्रम कोवैक्स ने अब तक 84 देशों में 38 मिलियन खुराक वितरित किया है, जिसमें 28 मिलियन भारत द्वारा प्रदत्त है।
  - इसके अलावा, वैक्सीन कूटनीति पहल के तहत भारत ने 60 मिलियन खुराक वितरित किया है, जिसमें आधा वाणिज्यिक शर्तों पर एवं 10 मिलियन का निर्यात अनुदान के रूप में दिया गया। भारत को अपने अंतरराष्ट्रीय दायित्व का पालन करना पड़ सकता है क्योंकि जिन्हें टीके की पहली खुराक दी उन्हें दूसरी खुराक की आवश्यकता होगी।

आगे की राह

- मल्टीमीडिया अभियान की सहायता से जागरूकता: यदि पुन: लॉकडाउन से बचना है तो मल्टीमीडिया अभियान की सहायता से आम जनता को बड़े पैमाने पर कोविड-19 से जुड़ी सूचनाएँ देने, शिक्षित करने एवं मास्क का उपयोग करने के लिए जागरूक करना होगा, जैसा कि पोलियो एवं एचआईवी के बारे में सूचना देने के लिए किया जाता रहा है।
- घरेलू उत्पादन को प्रोत्साहित करना: घरेलू स्तर पर टीकों के निर्माण से जुड़े मुद्दे, जैसे- वित्त की समस्या, प्रोजेक्ट को त्वरित सहमति इत्यादि, को समझकर उसका तीव्र गति से निराकरण सरकार की प्राथमिकता सूची में होनी चाहिये।
  - आगे जैसे-जैसे आपूर्ति व्यवस्था बेहतर होगी वैसे-वैसे कार्यान्वयन के निर्णयों को बेहतर बनाने तथा दक्षता हासिल करने के लिए टीकाकरण की व्यवस्था को विकेंद्रीकृत किया जाना चाहिये एवं कम-से-कम पाँच महीने का स्टॉक रखकर ही निर्यात किया जाना चाहिये। इसके अलावा, टीका अपव्यय को कम करने की आवश्यकता है।
- टीका आपूर्ति श्रृंखला को मजबूत करना: इलेक्ट्रॉनिक वैक्सीन इंटेलिजेंस नेटवर्क (ईवीआईएन) प्रणाली को मजबूत बनाने से देश के सभी कोल्ड चेन पॉइंट्स पर वैक्सीन स्टॉक एवं स्टोरेज तापमान की जानकारी वास्तविक समय में मिलेगी।

निष्कर्ष

भारत का कोविड-19 वैक्सीन अभियान एक ऐतिहासिक अभियान है। इसमें न केवल भारत का अपनी आबादी का टीकाकरण शामिल है बल्कि, विश्व के बड़े टीका उत्पादकों में से एक होना भी शामिल है। टीकों के विकास और वितरण से जुड़े मुद्दों को संबोधित करते हुए कम-से-कम समय में बड़ी आबादी तक कुशलतापूर्वक टीकों की पहुँच सुनिश्चित करनी चाहिये।

न्यायपालिका: समस्याएँ एवं समाधान

न्याय का आशय नैतिक अधिकार, तर्कसंगतता, समानता और निष्पक्षता के आधार पर निर्णय लेने से है। देश के नागरिकों को समयोचित तरीके से न्याय प्रदान करने का दायित्त्व देश के सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के कंधों पर होता है। भारत में यह भूमिका भारत के मुख्य न्यायाधीश (Chief Justice of India- CJI) द्वारा निभाई जाती है; इन्हें न्यायपालिका का 'मास्टर ऑफ द रोस्टर' कहा जाता है।

हाल ही में पूर्व CJI जस्टिस एस.ए. बोबडे की सेवानिवृत्ति के बाद सर्वोच्च न्यायालय के सबसे वरिष्ठ न्यायाधीश जस्टिस एन. वी. रमना (N. V. Ramana) ने देश के 48वें मुख्य न्यायालय के रूप में शपथ ली है। उन्होंने ऐसे समय में CJI के रूप में पदभार ग्रहण किया है, जब भारत कोविड-19 महामारी के कारण एक बड़े संकट से गुजर रहा है। ऐसे में उनके समक्ष सभी को समयोचित तरीके से न्याय प्रदान करने की दिशा में में कई संभावित चुनौतियाँ मौजूद हैं।

नोट :

न्यायपालिका से संबंधित मुद्दे

- सर्वोच्च न्यायालय की अक्षमता: सर्वोच्च न्यायालय, न केवल मौलिक और अन्य संवैधानिक अधिकारों के रक्षक रूप में, बल्कि विधि के शासन के संरक्षक के रूप में अपने दायित्त्वों को पूरा करने में विफल रहा है।
  - कई बार नागरिकों, विपक्षी दलों और कार्यकर्त्ताओं से जुड़े राजनीतिक रूप से संवेदनशील मामलों के संदर्भ में, न्यायालय ने संवैधानिक अधिकारों और मूल्यों को बहाल करने के बजाय इन मामलों को कार्यपालिका को स्थानांतरित कर दिया।
  - हाल ही में सेवानिवृत्त हुए 47वें CJI न्यायिक इतिहास में पहले CJI हैं, जो 1990 के दशक में कॉलेजियम सिस्टम के आगमन के बाद शीर्ष अदालत में एक भी नियुक्ति के लिये सिफारिश किये बिना सेवानिवृत्त हुए हैं।
- न्यायाधीशों की कमी: भारत में प्रति दस लाख जनसंख्या पर 20 न्यायाधीश मौजूद हैं, जबकि अन्य देशों में यह संख्या औसतन 50-70 के आसपास है।
- उच्च न्यायालयों में रिक्तियाँ एवं लंबित मामले: उच्च न्यायालयों में लंबित मामले एवं रिक्तियों से संबंधित आँकड़े काफी चिंताजनक हैं। आँकड़ों की मानें तो कुल मिलाकर 40% रिक्तियाँ एवं 57 लाख से अधिक मामले न्यायालय में लंबित हैं।
  - मद्रास उच्च न्यायालय में केवल 7% रिक्तियाँ हैं, किंतु फिर भी 5.8 लाख मामले लंबित है।
  - जबकि कोलकाता उच्च न्यायालय में लगभग 44% पद रिक्त हैं और 2.7 लाख मामले लंबित है।
- भर्ती प्रक्रिया में देरी: न्यायपालिका में पदों को आवश्यकतानुसार तेज़ी से नहीं भरा जाता है। 135 मिलियन जनसंख्या वाले देश के लिये, न्यायाधीशों की कुल संख्या केवल 25000 के आसपास है। उच्च न्यायालयों में लगभग 400 पद रिक्त हैं एवं निचली न्यायपालिका में लगभग 35% पद रिक्त हैं।
- महिलाओं और अल्पसंख्यकों का अपर्याप्त प्रतिनिधित्व: यद्यपि देश में लिंग आधारित मामलों में काफी बढ़ोतरी हुई है एवं देश में महिलाओं की आबादी लगभग आधी हैं फिर भी सर्वोच्च न्यायालय में वर्तमान में केवल एक ही महिला न्यायाधीश हैं।
  - वहीं वर्तमान में सर्वोच्च न्यायालय में केवल एक ही मुस्लिम न्यायाधीश हैं, जबकि न्यायालय में न्यायाधीश के तौर पर सिख, बौद्ध, जैन या आदिवासी समुदाय का कोई भी प्रतिनिधि नहीं है।
- न्यायिक विलंब के लिये कोई कठोर कार्रवाई का अभाव: यद्यपि न्यायिक प्रक्रिया में विलंब की समस्या सर्वविदित है, किंतु इसके बावजूद इस समस्या की बारीकियों को समझने के लिये एवं इसे हल करने के लिये कोई विशेष प्रयास नहीं किया गया है।

नए CJI के लिये चुनौतियाँ

नवनियुक्त CJI के सम्मुख निम्नलिखित चुनौतियाँ हैं:

- कोविड-19 महामारी के कारण वर्तमान में मौजूद अभूतपूर्व संकट के दौरान अदालत का कामकाज जारी रखना।
- शीर्ष अदालत की प्रशासनिक मशीनरी को सुधारना और कॉलेजियम के कामकाज को सुव्यवस्थित करना।
- न्यायिक बुनियादी ढाँचे को मज़बूत करना और बड़े पैमाने पर लंबित मामलों को निपटाना।
- सर्वोच्च न्यायालय में जस्टिस रमना के कार्यकाल में लगभग 13 पद खाली होंगे क्योंकि वर्ष 2021 के अंत तक कई जज रिटायर होने वाले हैं।
- सबसे बड़ी चुनौती उच्चतम न्यायालय के साथ-साथ उच्च न्यायालयों में नियुक्ति प्रक्रिया को सुव्यवस्थित करना होगा जो न्यायाधीशों की कमी के कारण बड़ी संख्या में लंबित मामलों से जूझ रहे हैं।
- राजधानी में बड़े पैमाने पर कोविड-19 संक्रमण को देखते हुए शारीरिक रूप से सुनवाई के लिये अदालतों के खुलने की संभावना नगण्य है।
- अदालतों में सुनवाई को डिजिटल रूप से करना होगा जबकि तकनीकी समस्याओं के कारण वकीलों द्वारा इसकी आलोचना की गई है।

आगे की राह

- सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका: जिस तरह से विधायिका और कार्यपालिका अपनी शक्ति लोगों से प्राप्त करती है, उसी तरह न्यायपालिका भी अपनी शक्ति देश के लोगों से से ही प्राप्त करती है। अत: एक बिलियन से अधिक आबादी वाले देश की जनता को अपने अधिकारों को सुरक्षित रखने के लिये उच्च न्यायालयों की ज़रूरत है।

नोट :

- सर्वोच्च न्यायालय में पाँच वरिष्ठतम न्यायाधीशों की कॉलेजियम व्यवस्था को अधिक पारदर्शी तरीके से काम करना चाहिये और न्यायपालिका में विश्वास को बढ़ावा देने के लिये अधिक जवाबदेह बनाया जाना चाहिये।

- CJI की भूमिका: नए मुख्य न्यायाधीश को अपने पूर्ववर्तियों के कार्यों की गहनता से समीक्षा करनी चाहिये एवं बेंचों को मामले आवंटित करने में पूर्वाग्रह से मुक्त होकर न्याय व्यवस्था को पुनर्जीवित करने के लिये ठोस कदम उठाने चाहिये। इसके बाद ही विधि का शासन बहाल होगा एवं संविधान का अनुपालन होगा।
- नियुक्ति प्रणाली को सुव्यवस्थित करना: रिक्तियों को बिना किसी अनावश्यक विलंब के तेज़ी से भरना चाहिये।
  - न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिये एक उचित समय-सीमा निर्धारित की जानी चाहिये और पहले से सिफारिशें दी जानी चाहिये।
  - संविधान में अखिल भारतीय न्यायिक सेवाओं का प्रावधान है अत: इसके गठन की दिशा में कदम बढ़ाना चाहिये। यह निश्चित रूप से भारत में एक बेहतर न्यायिक प्रणाली स्थापित करने में मदद कर सकता है।
- उचित प्रतिनिधित्व: सर्वोच्च एवं उच्च न्यायालयों मे महिलाओं और अल्पसंख्यक समुदाय को उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त होना चाहिये।
  - कॉलेजियम का कर्तव्य है कि वह बेंच को विविधता प्रदान करने के लिये समाज के सभी वर्गों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व दे ताकि जनता का विश्वास, जो न्यायपालिका की सबसे बड़ी ताकत है, को बनाया रखा जा सके।

निष्कर्ष

भारत के मुख्य न्यायाधीश बिना किसी शर्त, पक्षपात एवं विलंब के भारत की जनता को न्याय प्रदान कर न्यायपालिका के प्रति जनता का विश्वास बनाए रखने के लिये जवाबदेह हैं। न्यायालय के अंदर मौजूद चुनौतियों के अलावा न्यायालय के बाहर मौजूद चुनौतियों में से सबसे बड़ी चुनौती कोविड-19 का बढ़ता संक्रमण है।

एक ऐसी न्यायिक प्रणाली की आवश्यकता हमेशा बनी हुई है, जहाँ सबूतों एवं गवाहों की निष्पक्ष जाँच हो, आँकड़ों का निष्पक्ष विश्लेषण हो, न्याय प्रक्रिया में विलंब न हो।

सर्वोच्च न्यायालय की कॉलेजियम व्यवस्था को न्यायाधीशों की नियुक्ति पर विशेष ध्यान देते हुए रिक्तियों एवं लंबित मामलों को तेज़ी से निपटना चाहिये।

नोट :

आर्थिक घटनाक्रम

कोविड-19 की दूसरी लहर और भारतीय अर्थव्यवस्था

पिछला वित्त वर्ष 2020-21 भारत की अर्थव्यवस्था के लिये एक रोलर कोस्टर की सवारी से कम नहीं रहा। जहाँ देशभर में आंशिक, पूर्ण लॉकडाउन एवं कर्फ्यू के साथ बेरोज़गारी में वृद्धि देखी गई। इन कारणों से वित्तीय वर्ष 2021-22 तक भी जीडीपी वर्ष 2019-20 की विकास दर स्तर पर लौटने का कोई अनुमान नहीं है। इन अनुमानों को वर्ष 2020 के अंत में संशोधित किया गया था, साथ ही अर्थव्यवस्था के पटरी पर लौटने की उम्मीद जताई गई थी।

हालाँकि जब आईएमएफ ने भारत के सकल घरेलू उत्पाद के पूर्वानुमान को वित्तीय वर्ष 2021-22 के लिये 12.5% तक रहने की संभावना जताई तो अर्थव्यवस्था में सकारात्मक सुधार की उम्मीद दिखी, किंतु कोविड-19 की दूसरी लहर व्यवसायों और उपभोक्ताओं के लिये बेहद भयावह साबित हो रही है।

भारत में प्रतिदिन कोविड-19 के नए मामले बड़ी संख्या में बढ़ रहे हैं तथा विश्व में कोविड-19 के 20% नए मामले केवल भारत में दर्ज किये जा रहे हैं। भारत की स्थिति पिछले साल की तुलना में अधिक खराब होती जा रही है एवं अभी भी भारत की एकमात्र उम्मीद यहाँ टीके की अधिकाधिक उपलब्धता है।

भारत की आर्थिक स्थिति में सुधार:

- आर्थिक वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारक: कुछ महीनों पहले केंद्रीय बजट में सकल कर संग्रह के संशोधित अनुमानों के अनुसार, ₹ 20.16 लाख करोड़ (₹ 20.16 ट्रिलियन) तक रहने का अनुमान है जो पिछले अनुमान की तुलना में ₹1.2 लाख करोड़ अधिक है। वर्ष 2020-21 में केंद्र सरकार का अप्रत्यक्ष कर संग्रह 10.71 लाख करोड़ रुपए तक पहुँच गया है जो 2019-20 के कर संग्रह से अधिक है।
  - केंद्र के अप्रत्यक्ष कर संग्रह ने वित्तीय वर्ष 2020-21 में ₹10.71 लाख करोड़ का आँकड़ा प्राप्त किया है, जो वित्तीय वर्ष 2019-20 के कर संग्रह से अधिक है।
  - क्रय प्रबंधक सूचकांक (पीएमआई), ट्रैक्टर और दोपहिया बिक्री, माल एवं सेवा कर संग्रह, ई-वे बिल और रेल माल यातायात जैसे संकेतक 2021 में निरंतर वृद्धि दर्शा रहे हैं।
  - निर्यात के आँकड़ों में भी 31 बिलियन डॉलर की भारी उछाल देखी गई है।

कोविड मामलों और लॉकडाउन का प्रभाव:

- एनआईबीआरआई के अनुसार सबसे अधिक वीक-ऑन-वीक डिक्लाइन: नोमुरा इंडिया बिजनेस रिजंप्शन इंडेक्स (एनआईबीआरआई), आर्थिक गतिविधि के सामान्यीकरण को साप्ताहिक रूप से जाँचता है। इसके अनुसार, फरवरी, 2021 में सूचकांक 99 अंक तक पहुँच गया, लेकिन अप्रैल में यह सूचकांक गिरकर 90.5 पर आ गया, जो वीक-ऑन-वीक में बड़ी गिरावट है।
  - इस गिरावट का कारण मुख्य रूप से कोविड -19 की दूसरी लहर है।
- शहरों पर प्रभाव: महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, पंजाब और छत्तीसगढ़ जैसे राज्य जो कि भारत के सकल घरेलू उत्पाद में 30% से अधिक का योगदान करते हैं, वहाँ COVID-19 मामलों में सबसे अधिक वृद्धि देखने को मिल रही है।
  - यहाँ तक कि इन राज्यों में आंशिक लॉकडाउन एवं लॉकडाउन के कारण लगे प्रतिबंध भी आर्थिक गतिविधियों को प्रमुख रूप से प्रभावित करेंगे। साथ ही, यदि अनियंत्रित संक्रमणों के कारण लॉकडाउन को आगे बढ़ाया जाता है, तो नुकसान और भी अधिक व्यापक होगा।
- औद्योगिक उत्पादन में संकुचन: औद्योगिक उत्पादन सूचकांक (IIP) में फरवरी, 2021 (अगस्त 2020 से) में 3.6% की दर से सबसे अधिक संकुचन देखी गई है।
  - कोविड-19 मामलों की हालिया स्थिति ने आर्थिक मोर्चों पर चिंता बढ़ा दी है, विशेषकर अब जब दूसरी लहर के कारण आंशिक रूप से आर्थिक गतिविधियों पर कठोर प्रतिबंध लगाए जाने की संभावना है।
  - वर्तमान में लगाए जा रहे प्रतिबंध जैसे कि रात के समय कर्फ्यू और सप्ताहांत में लॉकडाउन आर्थिक रूप से कम चिंताजनक हैं। हालाँकि, अगर स्थिति बिगड़ती है, तो कठोर उपाय करना ज़रूरी हो जाएगा।

नोट :

- विनिर्माण और अन्य क्षेत्र: हालाँकि आंशिक लॉकडाउन के कारण विनिर्माण क्षेत्र सीधे प्रभावित नहीं हो रहा है किंतु, यात्रा और पर्यटन जैसे संपर्क एवं सेवा क्षेत्रों पर कई गुना अधिक प्रभाव पड़ेगा, क्योंकि इन क्षेत्रों का अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों के साथ मजबूत अंतर्संबंध हैं।

आगे की राह

- टीकाकरण की महत्त्वपूर्ण भूमिका: अर्थव्यवस्था को एक और बड़े व्यवधान से बचाने का एकमात्र प्रभावी तरीका टीकों की मांग और आपूर्ति दोनों में तेज़ी लाना है।
  - अब तक 10 करोड़ से अधिक टीके लगाए जा चुके हैं; लेकिन इसमें से देश की आबादी के केवल 8% हिस्से को ही कम-से-कम एक डोज प्राप्त हुई है, इसके विपरीत अमेरिका और यूके जैसे देश अपनी कुल आबादी के 50% हिस्से का टीकाकरण कर चुके हैं।
  - कोविड-19 की दूसरी लहर को नियंत्रित करने में टीकाकरण की भूमिका प्रमुख है। लेकिन टीकों की कमी से टीकाकरण की प्रगति धीमी हो सकती है।
- इसलिये सरकार अब टीकों की पहुँच बढ़ाएगी तथा टीकाकरण के लिये पात्रता मानदंड को और अधिक विस्तारित करेगी।
- टैक्स को कम करना: आरबीआई के अनुसार, अप्रैल-जून तिमाही में मुद्रास्फीति के 5.2% की दर से बढ़ने की संभावना है।
  - जब तक केंद्र एवं राज्य दोनों पेट्रोप्रोडक्ट्स से अपने हिस्से का राजस्व कम नहीं करते एवं ईंधन पर लगने वाले कर को कम नहीं करते तब तक उपभोक्ताओं पर मूल्य दबाव कम नहीं होगा।
- नीति निर्माताओं की भूमिका: नीति निर्माताओं की ओर से मांग और पूर्ति को सुधारने के लिये अधिक प्रयासों तथा बेहतर नीतियों की आवश्यकता है किंतु इसे मुद्रास्फीति एवं समग्र आर्थिक स्थिरता को विचलित किये बिना किया जाना चाहिये।
  - इसके अलावा, नीति निर्माताओं को यह नहीं भूलना चाहिये कि भारत पिछले साल की तुलना में वायरस से लड़ने के लिये बेहतर स्थिति में है। अत: केंद्र और राज्यों सरकारों का प्राथमिक उद्देश्य टीकाकरण अभियान को गति देना होना चाहिये।
- केंद्रीय बजट में प्रस्तावित व्यय: वैश्विक विकास में वृद्धि और केंद्रीय बजट के प्रस्तावित पूंजी व्यय के कार्यान्वयन से भारत की आर्थिक स्थिति को मज़बूती मिलेगी।
  - इसके अलावा अब तक कृषि में विकास और ग्रामीण क्षेत्रों में मांग काफी मज़बूत रही है इससे भी विकास को समर्थन मिलने की उम्मीद है।

निष्कर्ष:

अगर पिछले साल कोविड -19 कर्व को संतुलित करने एवं आर्थिक कठिनाई में से किसी एक को चुनना मुश्किल था तो इस बार यह उससे भी अधिक मुश्किल होगा। नए वित्तीय वर्ष की शुरुआत के साथ दूसरी लहर शुरू हुई है, जिसका अर्थ है कि ये लहर बजट में रूढ़िवादी राजस्व लक्ष्यों (Conservative Revenue Targets) को भी प्रभावित कर सकती है। इन सभी कठिन परिस्थितियों में, भारत के पास एकमात्र विकल्प है टीकाकरण की गति को तेज़ करना।

ग्रीन हाइड्रोजन: नवीकरणीय ऊर्जा का बेहतर विकल्प

हाल ही में भारत सरकार ने अपने नवीकरणीय ऊर्जा के लक्ष्य को वर्ष 2022 के 175 गीगावाट से बढ़ाते हुए वर्ष 2030 तक 450 गीगावॉट कर दिया है। इस लक्ष्य की पूर्ति हेतु केंद्रीय बजट 2021 में राष्ट्रीय हाइड्रोजन ऊर्जा मिशन का प्रस्ताव दिया गया है।

हाइड्रोजन एक ऐसा तत्त्व है जो पृथ्वी पर प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। अत: इसका उपयोग स्वच्छ ईंधन के लिये वैकल्पिक तौर पर किया जा सकता है। भविष्य में स्वच्छ ईंधन के प्रयोग एवं बिजली की उच्चतम मांग को पूरा करने के लिये सरकार को हाइड्रोजन ईंधन के उत्पादन की दिशा में कार्य करना चाहिये।

काउंसिल ऑन एनर्जी, एनवायरनमेंट एंड वाटर (CEEW) के एक विश्लेषण के अनुसार अमोनिया, स्टील, मेथनॉल, ऊर्जा भंडारण और परिवहन जैसे क्षेत्रों में भारत में ग्रीन हाइड्रोजन की मांग 1 मिलियन टन तक हो सकती है। हालाँकि वाणिज्यिक-पैमाने पर हाइड्रोजन के उपयोग को बढ़ाने में कई चुनौतियाँ हैं।

नोट :

ग्रीन हाइड्रोजन का महत्त्व

- ग्रीन हाइड्रोजन ऊर्जा भारत के राष्ट्रीय रूप से निर्धारित योगदान (Intended Nationally Determined Contribution-INDC) लक्ष्य को पूरा करने एवं क्षेत्रीय तथा राष्ट्रीय स्तर पर ऊर्जा सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिये महत्त्वपूर्ण है।
- ग्रीन हाइड्रोजन ऊर्जा भंडारण के एक विकल्प के रूप में प्रयोग में लाया जा सकता है, जिसका उपयोग भविष्य में नवीकरणीय ऊर्जा के रूप में किया जा सकता है।
  - परिवहन के संदर्भ में शहरी या अंतर्राज्यीय स्तर पर या लंबी दूरी के लिये रेलवे, बड़े जहाज़ों, बसों या ट्रकों आदि में ग्रीन हाइड्रोजन का उपयोग किया जा सकता है।
  - हाइड्रोजन प्रमुख अक्षय स्रोत होने के साथ-साथ आधारभूत संरचनाओं के लिये भी महत्त्वपूर्ण साबित हो सकता है।
- व्यावसायिक रूप से हाइड्रोजन का उपयोग करने के लिये सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक ग्रीन हाइड्रोजन का निष्कासन है। हाइड्रोजन निष्कासन की प्रक्रिया बेहद खर्चीली होती है।
- वर्तमान में अधिकांश नवीकरणीय ऊर्जा संसाधन, जिससे कम लागत में बिजली का उत्पादन किया जा सकता है, उनका उत्पादन केंद्र उन स्थानों से दूर स्थित है जहाँ उनकी मांग है।
  - हाइड्रोजन के उत्पादन में उपयोग की जाने वाली तकनीक, जैसे- कार्बन कैप्चर और स्टोरेज़ (CCS) एवं हाइड्रोजन ईंधन सेल प्रौद्योगिकी अभी प्रारंभिक अवस्था में हैं। इस कारण भी ग्रीन हाइड्रोजन के उत्पादन की लागत काफी अधिक है।
- कानूनी बढ़ाएँ: विद्युत अधिनियम, 2003 ने राज्य की सीमाओं के पार खुली बिजली का परिचालन करने का प्रावधान किया है। हालाँकि ज़मीनी स्तर पर इसे लागू नहीं किया जा सका है।

आगे की राह

- विकेंद्रीकृत उत्पादन: विकेन्द्रीकृत हाइड्रोजन उत्पादन को एक इलेक्ट्रोलाइज़र (जो जल को H_2 और O_2 में विभाजित करता है) में अक्षय ऊर्जा की पहुँच सुनिश्चित कर किया जाता है।
- न्यूनतम आंतरायिकता: विकेंद्रीकृत हाइड्रोजन उत्पादन के लिये चौबीस घंटे नवीकरणीय ऊर्जा की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिये एक तंत्र की आवश्यकता है।
  - नवीकरणीय ऊर्जा से जुड़ी आंतरायिकता (Intermittency) जिसका अर्थ है किसी शक्ति स्रोत को अनजाने में रोका जाना या आंशिक रूप से अनुपलब्ध होना, को कम करने के लिये, ईंधन सेल को निरंतर हाइड्रोजन आपूर्ति सुनिश्चित करना होगा।
- समवर्द्धित उत्पादन: पारंपरिक रूप से उत्पादित हाइड्रोजन के साथ ग्रीन हाइड्रोजन के उत्पादन से हाइड्रोजन की आपूर्ति की विश्वसनीयता में सुधार करने से ईंधन के अर्थशास्त्र में काफी सुधार होगा।
  - इस संदर्भ में मौजूदा प्रक्रियाओं, विशेष रूप से औद्योगिक क्षेत्र में ग्रीन हाइड्रोजन सम्मिश्रण जैसे कदम मददगार साबित हो सकते हैं।
- वित्त की उपलब्धता: नीति निर्माताओं को इस तकनीक पर कार्य करने वाली संस्थाओं को प्रारंभिक चरण में निवेश की सुविधा प्रदान करनी चाहिये और भारत में ग्रीन हाइड्रोजन से जुड़ी प्रौद्योगिकी को आगे बढ़ाने के लिये आवश्यक अनुसंधान एवं विकास को प्रोत्साहित करना चाहिये।
  - इसके लिये सरकार को तो आगे आना ही होगा साथ ही निजी क्षेत्र को भी भविष्य के लिये ऊर्जा सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिये आगे आना होगा।
- घरेलू विनिर्माण को बढ़ावा देना: भारत को राष्ट्रीय सौर मिशन के अनुभव से सीखना चाहिये और घरेलू विनिर्माण पर ध्यान केंद्रित करना चाहिये।
  - एंड-टू-एंड इलेक्ट्रोलाइज़र (End-to-End Electrolyser) विनिर्माण सुविधा की स्थापना के लिये उत्पादन आधारित प्रोत्साहन योजना जैसे उपायों की आवश्यकता होगी।
  - इसके लिये एक मज़बूत विनिर्माण रणनीति की भी आवश्यकता है जो उपलब्ध संसाधनों का लाभ उठा सके और वैश्विक मूल्य श्रृंखला के साथ एकीकरण करके इससे जुड़े खतरों को कम कर सके।

नोट :

निष्कर्ष

जलवायु परिवर्तन के खतरे को देखते हुए ग्रीन हाइड्रोजन से जुड़ी तकनीकों को प्रोत्साहित करना आवश्यक हो जाता है। ऊर्जा के इस विकल्प पर उल्लेखनीय कार्य करके भारत हाइड्रोजन तकनीक और उससे जुड़े अनुसंधान एवं विकास जैसे मुद्दों पर विश्व का नेतृत्व कर सकता है।

MSME में लघु उद्योग की स्थिति

यह एडिटोरियल दिनांक 23/04/2021 को 'द हिंदू बिज़नेस लाइन' में प्रकाशित लेख "Micro enterprises need exclusive treatment" पर आधारित है। इसमें सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग (MSME) क्षेत्र में सूक्ष्म उद्योग के महत्त्व पर चर्चा की गई है।

जैसा कि हम जानते हैं कि सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों (MSME) को सामाजिक समानता एवं आर्थिक विकास का इंजन स्वीकार किया जाता है। अधिकांश देशों की अर्थव्यवस्थाओं में MSME क्षेत्र 90 % से अधिक योगदान देता है एवं औद्योगिक उत्पादन तथा निर्यात को बढ़ावा देता है और साथ ही बेरोज़गारी की दर को कम करता है।

हालाँकि MSME में सूक्ष्म उद्योग सबसे अधिक संवेदनशील क्षेत्र है। इस क्षेत्र को विमुद्रीकरण एवं कोविड-19 के कारण आकस्मिक लॉकडाउन की दोहरी क्षति पहुँची है। इसके अतिरिक्त, सूक्ष्म उद्योगों से जुड़े नीतिगत निर्णय लेने के लिये इस क्षेत्र से जुड़ी कई विशेषताओं एवं बाधाओं का ध्यान रखना पड़ता है। संपूर्ण MSME क्षेत्र के लिये बनाई गई नीतियाँ इसके लिये कम उपयोगी हैं।

MSME में सूक्ष्म उद्योगों का महत्त्व

- राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (National Sample Survey Organisation - NSSO) के नवीनतम आँकड़ों के अनुसार, विनिर्माण आधारित सूक्ष्म उद्योग MSME में 99.7% का योगदान देते हैं, वहीं MSME क्षेत्र में उपलब्ध कुल रोज़गार का 97.5% रोज़गार सूक्ष्म उद्योग द्वारा प्रदान किया जाता है।
- इसके अलावा सूक्ष्म उद्योग MSME के कुल उत्पादन में 90.1% और आय में 91.9% का योगदान देता है।
- शिल्पकार, बुनकर, खाद्य प्रसंस्करण, मछुआरा, बढ़ई, मोची, ट्यूटर, दर्जी, प्लंबर, इलेक्ट्रीशियन, सड़क किनारे स्थित ढाबे, आइसक्रीम, ब्यूटी पार्लर, सैलून, मोटर मरम्मत, विज्ञापन एजेंसी इत्यादि सूक्ष्म उद्योग के कुछ उदाहरण हैं। बड़ी संख्या में इनकी उपस्थिति सूक्ष्म उद्योग को हमारे सामाजिक-आर्थिक प्रणाली का सबसे विविधतापूर्ण एवं विस्तृत क्षेत्र बनाती है।
- सूक्ष्म उद्योगों के कई प्रकार है एवं उनकी गतिविधियाँ भी विविध प्रकार की हैं किंतु इनका आर्थिक योगदान अपेक्षाकृत कम है; फिर भी ये उद्योग विकास प्रक्रिया द्वारा दरकिनार किये गए असुरक्षित वर्गों के लिये बेहद ज़रूरी हैं।

सूक्ष्म उद्योग से संबंधित चुनौतियाँ

- पूंजीगत ऋण: सूक्ष्म उद्योगों में स्वयं की पूंजी की क्षमता कम है। अत: इन उद्योगों में परिसंपत्तियों का उपयोग किराये पर अधिक किया जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि इन उद्यमों में कुल लागत का एक बड़ा हिस्सा किराये पर खर्च होता है। पूंजीगत ऋण सूक्ष्म उद्योगों की वृद्धि को प्रोत्साहित करने के लिये बहुत कम उपयोगी हो पाते हैं। बाज़ार की अनिश्चितताओं से जुड़े जोखिमों को देखते हुए सूक्ष्म उद्यम में निवेश के लिये लाभदायक क्षेत्र नहीं माना जाता है।
- संरचनात्मक चुनौती: कार्यबल का एक बड़ा भाग इस क्षेत्र में होने की बाद भी इस समूह के लोगों की संगठित आवाज़ की कमी है। इस क्षेत्र के प्रतिनिधित्व के लिये अलग से कोई समूह सक्रिय नहीं है। अत: प्रक्रियाओं की सीमित और कम समझ के कारण बड़े स्तर पर सौदेबाजी (Negotiation) में ये पिछड़ जाते हैं।
- 'वन साइज फिट ऑल' दृष्टिकोण: MSME के तहत सूक्ष्म एवं लघु उद्योगों हेतु प्रोत्साहन पैकेज सामान्यीकृत रूप से डिज़ाइन किया जाता है। विशेष तौर पर लघु उद्योगों के लिये कोई वित्तीय प्रोत्साहन पैकेज अलग से डिज़ाइन नहीं किया जाता है।

आगे की राह

- लघु उद्योगों को समर्पित नीति: यह स्वीकार करने की आवश्यकता है कि एक सामान्यीकृत नीति को पूरे MSME क्षेत्र पर लागू नहीं किया जा सकता है और ना ही इससे सूक्ष्म उद्योगों की आवश्यकताएँ पूरी हो सकती है। दरअसल MSMEs पर RBI की विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट यह दर्शाती है कि सूक्ष्म (और लघु) उद्यमों में सौदेबाजी की क्षमता सीमित है। अत: सूक्ष्म उद्योग की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण सूचनाओं को एकत्र करने और उनके विशिष्ट उपयोग के लिये एक केंद्रित दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

नोट :

- सहकारी मॉडल: उन्नत प्रौद्योगिकी में उच्च निवेश, डिजिटल और प्रौद्योगिकी सक्षम प्लेटफार्मों के उपयोग, प्रौद्योगिकी के हस्तांतरण, मानव संसाधनों में अधिक निवेश, वित्त की बेहतर पहुँच आदि के लिये और अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है।
  - सहकारी मॉडल (किसान उत्पादक संगठनों की तर्ज़ पर) को बढ़ावा देने से इस संबंध में सूक्ष्म उद्योगों को मदद मिल सकती है।

निष्कर्ष:

वर्ष 2024-25 तक $5 ट्रिलियन अर्थव्यवस्था जैसे महत्त्वाकांक्षी लक्ष्य के लिये MSME क्षेत्र को नज़रंदाज करना सही नहीं होगा क्योंकि सूक्ष्म उद्योग का योगदान उत्पादन, आय एवं रोज़गार प्रदान करने में उल्लेखनीय है, जो एक बड़ी भूमिका निभा सकता है।

वित्तीय समावेशन में महिलाएँ

समावेशी आर्थिक विकास में वृद्धि करने एवं गरीबी में कमी लाने के लिये आर्थिक रूप से वंचित वर्गों तक गुणवत्तापूर्ण वित्तीय उत्पादों एवं सेवाओं की पहुँच बढ़ाना आवश्यक है। इसे देखते हुए वित्तीय समावेशन में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाना बेहद महत्त्वपूर्ण है क्योंकि महिलाएँ तुलनात्मक रूप से अधिक गरीबी, श्रम के असमान वितरण और आर्थिक संसाधनों पर नियंत्रण की कमी का अनुभव करती हैं।

आधार से जुड़े e-KYC (इलेक्ट्रॉनिक-नो योर कस्टमर) से आँकड़ों के संग्रहण और प्रमाणीकरण के प्रभावी कार्यान्वयन ने औपचारिक वित्तीय प्रणाली में महिलाओं के प्रवेश की बाधाओं को कम किया है। जनधन-आधार-मोबाइल (JAM) के जरिये 230 मिलियन महिलाओं को औपचारिक वित्तीय सेवा पारिस्थितिकी तंत्र में लाने की कोशिश की गई है।

डिजिटल प्रौद्योगिकियों और सरकार की पहल के बावजूद वित्तीय समावेशन में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने में आने वाली बाधाओं को पूर्णत: समाप्त नहीं किया जा सका है।

महिलाएँ और वित्तीय समावेशन

- वित्तीय लचीलापन: कम आय वाले घरों में खर्च और बचत का निर्णय महिलाएँ लेती हैं। इस प्रकार वे पुरुषों की तुलना में अधिक प्रतिबद्ध और अनुशासित बचतकर्त्ता हैं।
  - कई शोधों से पता चला है कि जब भी उचित अवसर मिलता है तो महिलाएँ बचत करती हैं और ऐसा करके वित्तीय लचीलेपन को बढ़ावा देती हैं। अत: बैंकों के लिये महिलाओं को लक्षित करना आर्थिक रूप से अधिक व्यवहार्य है।
- सामाजिक पूंजी में वृद्धि: वित्तीय संस्थानों के साथ महिलाओं के जुड़ने से, ऐसे संस्थानों में कार्य में महिलाओं की भागीदारी एवं ऋण प्राप्त करने से उनकी क्षमता बढ़ने से सामाजिक पूंजी में बढ़ोतरी होगी।
  - इस प्रकार 230 मिलियन महिला जन-धन ग्राहकों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने से 920 मिलियन लोगों (यदि एक परिवार में औसतन चार सदस्य हों तो) के जीवनस्तर में सुधार संभव है।
- महिलाओं के सशक्तीकरण और गरीबी में कमी के लिये: कम आय वाली महिलाओं को बचत करने, उधार लेने, भुगतान करने और प्राप्त करने के लिये प्रभावी और सस्ता वित्तीय साधन प्रदान करना तथा जोखिम का प्रबंधन करना महिला सशक्तीकरण के साथ-साथ गरीबी में कमी दोनों उद्देश्यों के लिये महत्त्वपूर्ण है।
- वित्तीय समावेशन में लैंगिक अंतराल: वर्ष 2017 के ग्लोबल फाइनडेक्स डेटाबेस के अनुसार, भारत में 15 वर्ष से अधिक आयु के 83% पुरुष जबकि, केवल 77% महिलाओं का खाता किसी वित्तीय संस्थान में खुला हुआ है।

माँग आधारित बाधाएँ:	आपूर्ति आधारित बाधाएँ:	कानूनी और नियामक बाधाएँ:
घर के भीतर सौदेबाजी की शक्ति (Bargaining Power) का अभाव।	समय की कमी या सामाजिक मानदंडों के कारण वित्तीय गतिशीलता में कमी।	खाता खुलवाने में आवश्यक प्रमाण पत्र जो महिलाएँ आसानी से प्राप्त नहीं कर सकती है।
ऐसी आर्थिक गतिविधियों में निवेश करना जो कम फायदेमंद है।	उत्पाद डिज़ाइन और विपणन के लिये लिंग-आधारित नीतियों और प्रथाओं का अभाव।	औपचारिक पहचान प्राप्त करने में बाधाएँ।

नोट :

महिलाओं के अवैतनिक घरेलू काम में संलग्नता।	अनुचित वितरण चैनल।	संपत्ति और अन्य संपार्श्विक के स्वामित्व और विरासत प्राप्त होने में आने वाली कानूनी बाधाएँ।
ऋण लेने हेतु संपार्श्विक (Collateral) के लिये संपत्ति की कमी।	डिजिटल समावेशन की दर में कमी।	लिंग-समावेशी क्रेडिट रिपोर्टिंग सिस्टम का अभाव।

आगे की राह

- लिंग-आधारित आँकड़े: वित्तीय सेवा प्रदाताओं को ऐसी रणनीतियों को अपनाने की आवश्यकता है, जो लिंग आधारित आँकड़ों का उपयोग करके जन-धन में महिला खातों पर अधिक ध्यान केंद्रित कर सके।
  - उन्हें महिलाओं को लक्षित करना चाहिये। उनके साथ संवाद स्थापित कर वित्तीय उत्पादो और प्रक्रियाओं को महिला केंद्रित बनाना चाहिये।
  - नीतिगत स्तर पर कम आय वाली महिलाओं के लिये उत्पादों और सेवाओं के निर्माण के लिये लिंग-आधारित आँकड़ों को एकत्र करना एवं उनका विश्लेषण करना महत्त्वपूर्ण है।
- डिज़ाइन में परिवर्तन: वित्तीय सेवा प्रदाताओं को वित्तीय उत्पादों को महिलाओं की आवश्यकताओं और वरीयताओं के अनुसार डिज़ाइन करना चाहिये। साथ ही उन उत्पादों का प्रभाव महिलाओं की निवेश करने की क्षमता पर अनुकूल रूप से पड़ना चाहिये।
  - ऐसे वित्तीय उत्पाद, जो महिलाओं को अपने आय और खर्च पर नियंत्रण के साथ-साथ अधिक-से-अधिक गोपनीयता प्रदान करते हैं, महिलाओं को आकर्षित करते हैं।
- वित्तीय साक्षरता को प्रोत्साहित करना: वित्तीय साक्षरता प्रदान करना वित्तीय समावेशन की कुंजी है।
  - इस संदर्भ में, भारतीय रिज़र्व बैंक ने वित्तीय साक्षरता परियोजना शुरू की है।
  - परियोजना का उद्देश्य विभिन्न लक्षित समूहों, जिनमें स्कूल और कॉलेज जाने वाले बच्चे, महिलाएँ, ग्रामीण एवं शहरी, रक्षा कर्मी तथा वरिष्ठ नागरिक शामिल हैं, तक केंद्रीय बैंक और सामान्य बैंकिंग अवधारणाओं के बारे में जानकारी पहुँचाना है।

निष्कर्ष

महिलाओं को लक्षित कर वित्तीय समावेशन में उनकी भागीदारी सुनिश्चित कर ऋण की उपलब्धता एवं काम के अवसरों तक महिलाओं की पहुँच बढ़ाने से महिलाओं का सशक्तीकरण तो होगा ही साथ ही, घरेलू स्तर पर आर्थिक लचीलापन भी बढ़ेगा, जो किसी भी आर्थिक संकट (उदाहरण स्वरूप महामारी में बेरोज़गारी का संकट) के समय पतवार की तरह कार्य करेगा।

नोट :

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम

बांग्लादेश मुक्ति युद्ध, 1971

वर्ष 2021 में बांग्लादेश अपनी स्वतंत्रता की लड़ाई 'मुक्तिजुद्धो' या 'मुक्ति युद्ध' की स्वर्ण जयंती मना रहा है। वर्ष 1971 में बांग्लादेश की स्वतंत्रता ने न केवल बांग्लादेश को पूर्वी पाकिस्तान के दमनकारी शासन से आज़ादी दिलाई बल्कि दक्षिण एशिया के इतिहास और भू-राजनीतिक परिदृश्य को बदल दिया।

तत्कालीन पश्चिमी पाकिस्तान द्वारा बांग्लादेश (तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तान) पर सैन्य कार्रवाई से बड़े पैमाने पर शरणार्थी संकट उत्पन्न हुआ। दस मिलियन शरणार्थियों की दुर्दशा का बांग्लादेश के पड़ोसी देश भारत पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा। इसने भारत को पाकिस्तान के खिलाफ जवाबी कार्रवाई शुरू करने के लिये प्रेरित किया।

हालाँकि भारत का हस्तक्षेप प्रकृति में केवल परोपकारी न होकर व्यावहारिक राजनीति पर आधारित था।

बांग्लादेश मुक्ति युद्ध 1971: पृष्ठभूमि

- राजनीतिक असंतुलन: 1950 के दशक में पाकिस्तान की केंद्रीय सत्ता पर पश्चिमी पाकिस्तान का दबदबा था। पाकिस्तान पर सैन्य-नौकरशाही का राज था जो पूरे देश (पूर्वी एवं पश्चिमी पाकिस्तान) पर बेहद अलोकतांत्रिक ढंग से शासन कर रहे थे।
  - शासन की इस प्रणाली में बंगालवासियों का कोई राजनीतिक प्रतिनिधित्व नहीं था किंतु वर्ष 1970 के आम चुनावों के दौरान पश्चिमी पाकिस्तान के इस प्रभुत्व को चुनौती दी गई थी।
- अवामी लीग की विजय: वर्ष 1970 के आम चुनाव में पूर्वी पाकिस्तान के शेख मुज़ीबुर रहमान की अवामी लीग को स्पष्ट बहुमत प्राप्त था, जो प्रधानमंत्री बनने के लिये पर्याप्त था।
  - हालाँकि पश्चिमी पाकिस्तान पूर्वी पाकिस्तान के किसी नेता को देश पर शासन करने देने के लिये तैयार नहीं था।
- सांस्कृतिक अंतर: तत्कालीन पश्चिमी पाकिस्तान (वर्तमान पाकिस्तान) ने याह्या खान के नेतृत्व में पूर्वी पाकिस्तान (वर्तमान बांग्लादेश) के लोगों का सांस्कृतिक रूप से दमन करने की कोशिश की। उन्होंने पूर्वी पाकिस्तान पर भाषा पहनावा-ओढ़ावा इत्यादि को लेकर तानाशाही रवैया अपनाना शुरू किया। ज्ञातव्य है कि पूर्वी पाकिस्तान बंगाल से काटकर बनाया गया था अत: यहाँ की भाषा मुख्यत: बंगाली थी जबकि, पश्चिमी पाकिस्तान की भाषा मुख्यत: उर्दू थी।
  - भाषा और सांस्कृतिक मतभेदों के कारण पूर्वी पाकिस्तान की जनता स्वतंत्रता की मांग कर रही थी। राजनीतिक वार्ता विफल होने के बाद जनरल याह्या खान के नेतृत्त्व में पाकिस्तानी सेना ने पूर्वी पाकिस्तान के खिलाफ कार्रवाई शुरू करने का फैसला किया।
- ऑपरेशन सर्चलाइट: 26 मार्च, 1971 को पश्चिम पाकिस्तान ने पूरे पूर्वी पाकिस्तान में ऑपरेशन सर्चलाइट शुरू की।
  - इसके परिणामस्वरूप लाखों बांग्लादेशी भारत भागकर भारत आ गए। मुख्य रूप से पश्चिम बंगाल, असम, मेघालय और त्रिपुरा जैसे राज्यों में क्योंकि ये राज्य बांग्लादेश के सबसे करीबी राज्य हैं।
  - विशेष रूप से पश्चिम बंगाल पर शरणार्थियों का बोझ बढ़ने लगा और राज्य ने तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी और उनकी सरकार से भोजन और आश्रय के लिये सहायता की अपील की।
- इंडो-बांग्ला सहयोग: बांग्लादेश के स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ने वाली 'मुक्तिवाहिनी सेना' एवं भारतीय सैनिकों की बहादुरी से पाकिस्तानी सेना को मुँह की खानी पड़ी। ज्ञातव्य है कि मुक्तिवाहिनी सेना में बांग्लादेश के सैनिक, अर्द्ध-सैनिक और नागरिक भी शामिल थे। ये मुख्यत: गुरिल्ला पद्धति से युद्ध करते थे।
- पाकिस्तानी सेना की हार: 16 दिसंबर, 1971 को पूर्वी पाकिस्तान के मुख्य मार्शल लॉ प्रशासक और पूर्वी पाकिस्तान में स्थित पाकिस्तानी सेना बलों के कमांडर लेफ्टिनेंट जनरल आमिर अब्दुल्ला खान नियाज़ी ने 'इंस्ट्रूमेंट ऑफ सरेंडर' पर हस्ताक्षर किये।
  - द्वितीय विश्व युद्ध के बाद सबसे अधिक 93,000 से अधिक पाकिस्तानी सैनिकों ने भारतीय सेना और बांग्लादेश मुक्ति सेना के सामने आत्मसमर्पण कर दिया। भारत के हस्तक्षेप से मात्र 13 दिनों के इस छोटे से युद्ध से एक नए राष्ट्र का जन्म हुआ।

नोट :

बांग्लादेश मुक्ति युद्ध 1971: परोपकार या व्यवहारिक राजनीति ?

- एक साथ दो मोर्चों पर युद्ध का खतरा: भविष्य में कभी भी पाकिस्तान से युद्ध होने पर भारत को दोनों मोर्चों से युद्ध का खतरा था। पूर्वी पाकिस्तान के विद्रोह से भारत को इस खतरे को समाप्त करने का बहाना मिल गया।
  - हालाँकि वर्ष 1965 में पूर्वी मोर्चा काफी हद तक निष्क्रिय रहा, लेकिन इसने पर्याप्त सैन्य संसाधनों को अपने पास रोक लिया था जो पश्चिमी मोर्चे पर अधिक प्रभावशाली हो सकता है।
- प्रो-इंडिया अवामी लीग को अलग-थलग होने से रोकना: भारत के अनुसार अगर पाकिस्तान के गृहयुद्ध में वो अवामी लीग की सहायता नही करता तो इस आंदोलन का नेतृत्व वाम एवं चीन-समर्थक पार्टियों जैसे- राष्ट्रीय अवामी पार्टी और कम्युनिस्ट पार्टी के हाथ में जा सकता था।
- आंतरिक सुरक्षा पर खतरा: पाकिस्तानी सेना के खिलाफ प्रतिरोध का मुख्य तरीका माओवादी विचारधारा से प्रेरित गुरिल्ला युद्ध था।
  - यदि भारत बांग्लादेश मुक्ति युद्ध में हस्तक्षेप नहीं करता तो यह भारत के आंतरिक सुरक्षा हितों के लिये हानिकारक हो सकता था विशेष तौर पर नक्सली आंदोलन के संदर्भ में जो तब पूर्वी भारत में अपने उग्र रूप में था।
- सांप्रदायिक खतरा: जुलाई-अगस्त 1971 तक 90% मुस्लिम शरणार्थी पश्चिम बंगाल के सीमावर्ती ज़िलों में केंद्रित थे। अत: यदि भारत उनकी वापसी सुनिश्चित करने के लिये जल्द से जल्द कोई कदम नहीं उठाता तो राज्य में सांप्रदायिक संघर्ष का खतरा उत्पन्न होने की संभावना थी।
- गुटनिरपेक्षता पर प्रभाव: कूटनीति के स्तर पर भारत ने अकेले यह कार्य नहीं किया। प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने दुनिया के नेताओं को इस कार्य के लिये सावधानीपूर्वक तैयार किया एवं पूर्वी पाकिस्तान के उत्पीड़ित लोगों के लिये समर्थन का आधार बनाने में मदद की थी।
  - अगस्त 1971 में भारत-सोवियत संघ का संधि पर हस्ताक्षर करना भारत के लिये एक शूट-इन-द-आर्म के रूप में काम आया। इस जीत ने विदेशी राजनीति में भारत की व्यापक भूमिका को परिभाषित किया।
  - संयुक्त राज्य अमेरिका सहित दुनिया के कई देशों ने यह महसूस किया कि दक्षिण एशिया में शक्ति का संतुलन भारत की तरफ झुक गया है।

निष्कर्ष

एक नया राष्ट्र बनाने में भूमिका में भारत की सबसे बड़ी प्रशंसा यह है कि बांग्लादेश आज एक अपेक्षाकृत समृद्ध देश है, जो सबसे कम विकसित देश से अब विकासशील देश की श्रेणी में आ गया है। पूर्वी पाकिस्तान की राख से एक नए राष्ट्र, बांग्लादेश का निर्माण करना भारत की अब तक की सबसे बड़ी कूटनीतिक जीत है।

नोट :

पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण

जीवनदायी नदी गंगा: प्रदूषण एवं संरक्षण

हाल ही में भारत में विश्व का सबसे बड़ा धार्मिक मेला 'कुंभ' आयोजित किया गया तथा इस मेले के दौरान लाखों श्रद्धालु गंगा में डुबकी लगाने के लिये एकत्र हुए। प्राचीन काल से कुंभ मेला विभिन्न मान्यताओं, प्रथाओं, दर्शन और विचारधाराओं के सम्मेलन स्थल का प्रतीक रहा है।

दुर्भाग्य से समय के साथ आबादी में वृद्धि, अनियोजित औद्योगीकरण और असंवहनीय कृषि प्रथाओं के कारण गंगा एवं इसकी सहायक नदियों में प्रदूषक तत्त्वों में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है।

हालाँकि, फ्लैगशिप परियोजना 'नमामि गंगे' के क्रियान्वयन के बाद धीरे-धीरे गंगा नदी में प्रदूषण काफी कम हो गया है। इस परियोजना के तहत सार्वजनिक नीतियों, प्रौद्योगिकी का प्रयोग एवं सामुदायिक भागीदारी को शामिल करते हुए एक समग्र दृष्टिकोण अपनाया है।

नमामि गंगे परियोजना:

- यह केंद्र सरकार की योजना है जिसे वर्ष 2014 में शुरू किया गया था।
- सरकार द्वारा इस परियोजना की शुरुआत गंगा नदी के प्रदूषण को कम करने के उद्देश्य से की गई थी।
- इस योजना का क्रियान्वयन केंद्रीय जल संसाधन, नदी विकास और गंगा कायाकल्प मंत्रालय द्वारा किया जा रहा है।

गंगा नदी के प्रदूषित होने का कारण

- शहरीकरण: हाल के दशकों में भारत में तेज़ी से हुए शहरीकरण के कारण कई पर्यावरणीय समस्याएँ, जैसे- जल आपूर्ति, अपशिष्ट जल और इसका एक स्थान पर जमा होना साथ ही, इसके उपचार और निपटान जैसे समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं। गंगा नदी के तट पर बसे कई शहरों एवं कस्बों के लोगों एवं प्रशासन ने शहर से निष्कासित होने वाले अपशिष्ट जल, सीवरेज आदि की समस्या के बारे में गंभीरता पूर्वक विचार नहीं किया है।
- उद्योग: गंगा में सीवरेज और औद्योगिक अपशिष्टों के अप्रबंधित एवं अनियोजित प्रवाह के कारण इसके जल की शुद्धता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। जल में घुले ये औद्योगिक अपशिष्ट नदियों के जल का उपयोग करने वाले सभी जीवों के लिये हानिकारक हैं।
  - पेपर मिल्स, स्टील प्लांट्स, टेक्सटाइल और चीनी उद्योगों से भी काफी मात्रा में अपशिष्ट जल का निष्कासन नदियों के जल में होता है।
- कृषि अपवाह और अनुचित कृषि प्रथाएँ: कृषि के दौरान अत्यधिक उर्वरकों के प्रयोग के कारण मिट्टी में घुले हुए उर्वरक एवं कीटनाशक वर्षा-जल के साथ निकटतम जल निकायों में पहुँच जाते हैं।
- जल निकासी की व्यवस्था: गंगा में न्यूनतम प्रवाह के अध्ययन पर जल संसाधन मंत्रालय की एक रिपोर्ट के अनुसार, नदी के जल की गुणवत्ता पर उपचारित या अनुपचारित अपशिष्ट जल के निकास का प्रभाव नदी के प्रवाह पर निर्भर करता है। ज्ञातव्य है कि गंगा नदी जब मैदानी क्षेत्र में प्रवेश करती है तो इसमें जल की मात्रा कम हो जाती है और इसका न्यूनतम प्रवाह बाधित होता है। उदाहरण के लिये, ऊपरी गंगा नहर और निचली गंगा नहर के कारण गंगा की निचली धाराएँ लगभग सूखने लगी हैं।
- धार्मिक और सामाजिक आचरण: धार्मिक आस्था और सामाजिक प्रथाएँ भी गंगा नदी में प्रदूषण को बढ़ाने के लिये ज़िम्मेदार हैं।
  - नदी किनारे शवों का अंतिम संस्कार एवं आंशिक रूप से जले हुए शव नदी में बहाना, धार्मिक त्योहारों के दौरान लोगों का बड़ी संख्या में नदी में स्नान करना पर्यावरणीय रूप से हानिकारक प्रथाएँ है। ये प्रथाएँ नदी के जल को प्रदूषित करती हैं और जल की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं।

गंगा नदी में प्रदूषण को कम करने के लिये उठाए गए कदम

- सार्वजनिक नीति: वर्ष 2016 में सरकार ने राष्ट्रीय गंगा स्वच्छ मिशन (एनएमसीजी) को पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 के तहत प्रदत्त अधिकारों का प्रयोग करने के लिये अधिकृत करते हुए अधिसूचना जारी की।

नोट :

- एनएमसीजी ने नदी तटों पर खनन गतिविधियों को नियंत्रित करने, अतिक्रमण को रोकने और मूर्तियों के विसर्जन जैसी गतिविधियों को विनियमित करने के निर्देश भी जारी किये।

- प्रौद्योगिकी का प्रयोग: एनएमसीजी ने उपग्रह इमेज़री, रिमोट सेंसिंग और भू-स्थानिक समाधान जैसी अत्याधुनिक तकनीकों को अपनाया है, जिससे वास्तविक समय में गंगा और उसकी सहायक नदियों में प्रदूषकों की निगरानी की जा सकती है।
  - सीवेज उपचार हेतु नए बुनियादी ढाँचे को डिज़ाइन करने के लिये वैज्ञानिकों ने पूर्वानुमानित मॉडल तैयार किये हैं।
- सामुदायिक भागीदारी: गंगा नदी की सफाई हेतु सामुदायिक भागीदारी को प्रोत्साहित करने के लिये गंगा तट पर बसे शहरों, गाँवों एवं कस्बों में "गंगा प्रहरी" नामक नव-स्थापित समुदाय समूह के माध्यम से जागरुकता अभियान नियमित रूप से चलाया जा जा रहा है। उनके माध्यम से, सरकार "जल चेतना" को "जन चेतना" एवं पुन: इसे "जल आंदोलन" में बदल सकती है।

निष्कर्ष

भारत का संविधान, केंद्र और राज्य सरकारों को इसके नागरिकों के लिये स्वच्छ तथा स्वस्थ वातावरण एवं स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराने का प्रावधान करता है। (अनुच्छेद 48A, अनुच्छेद 51 (A) (g), अनुच्छेद 21)। साथ ही, सर्वोच्च न्यायालय ने घोषणा की है कि स्वस्थ और स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार एक मौलिक अधिकार है।

इस संदर्भ में नमामि गंगे परियोजना गंगा नदी को साफ करने के लिये सही दिशा में उठाया गया एक कदम है एवं भारत की अन्य नदियों में प्रदूषण से निपटने के लिये इस परियोजना का अनुकरण किया जाना चाहिये।

नोट :

सामाजिक न्याय

नारीवादी विदेश नीति

भारत को सितंबर 2020 में चार साल के कार्यकाल के लिये महिलाओं की स्थिति पर संयुक्त राष्ट्र आयोग के सदस्य के रूप में चुना गया है, जहाँ भारत लैंगिक समानता, विकास एवं शांति को बढ़ावा देने के लिये प्रतिबद्ध है।

विडंबना यह है कि हाल ही में जारी वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम की वैश्विक लैंगिक अंतराल रिपोर्ट, 2021 में भारत 28 रैंक फिसलकर 140वें रैंक पर आ गया है। ज्ञातव्य है कि उसने 156 देशों को रैंक प्रदान किया गया था।

यदि भारत लैंगिक समानता के मामले में अपने लक्ष्यों की पूर्ति करना चाहता है तो भारत को एक नारीवादी विदेश नीति (Feminist Foreign Policy- FFP) (एफएफपी) फ्रेमवर्क को अपनाने पर विचार करना होगा। एफएफपी फ्रेमवर्क एक अधिक औपचारिक दृष्टिकोण है जो विकास मॉडल से आगे जाकर लैंगिक समानता निर्धारित करने हेतु व्यापक पहुँच, प्रतिनिधित्व और निर्णय लेने की बात करता है।

नारीवादी विदेश नीति फ्रेमवर्क क्या है?

- एफएफपी कूटनीति एवं सुरक्षा पर तीन मुख्य नारीवादी सिद्धांतों पर कार्य करता है: सुरक्षा की व्यापक समझ, अंतर्राष्ट्रीय शक्ति संबंधों का संतुलन एवं महिलाओं के लिये राजनीतिक एजेंसी।
- इस अर्थ में एफएफपी युद्ध, शांति और विकास की पारंपरिक धारणाओं से आगे बढ़कर अर्थशास्त्र, वित्त, स्वास्थ्य एवं पर्यावरण सहित अन्य क्षेत्रों को भी विदेश नीति में शामिल करने का प्रयास करता है।
- नारीवादी विदेश नीति फ्रेमवर्क सुरक्षा को समग्र तरीके से देखता है एवं महिलाओं और हाशिये पर रहने वाले समूहों को ध्यान में रखते हुए नीतियों का निर्माण करता है। एफएफपी फ्रेमवर्क सदियों से पुरुषों के कूटनीति और विदेश नीति पर एकाधिकार के प्रति एक प्रतिक्रिया है।
- तथ्यों के अनुसार, निर्णय लेते समय अलग-अलग समूहों को ध्यान रखकर निर्णय लेने से निर्णय अधिक सटीक होता है। अत: महिलाओं को न केवल शांति व्यवस्था कायम रखने में शामिल करना आवश्यक है, बल्कि कूटनीति, विदेश और सुरक्षा नीति में भी शामिल करना चाहिये। कई मायनों में यह विकास के बॉटम अप दृष्टिकोण पर कार्य करता दिखता है।
- स्वीडन के बाद कई अन्य देशों - कनाडा, फ्रांस, जर्मनी और, हाल ही में मेक्सिको ने भी या तो नारीवादी विदेश नीति फ्रेमवर्क या फिर नीतियों के निर्माण में नारीवादी दृष्टिकोण को अपनाया।

भारत को एफएफपी फ्रेमवर्क की आवश्यकता क्यों है?

- एफएफपी दृष्टिकोण को अपनाने से भारत में समानता, सामाजिक कल्याण और शांति के लिये मार्ग प्रशस्त होता है।
- एफएफपी दृष्टिकोण से भारत की निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में महिलाओं और हाशिये पर रहने वाले अन्य समूहों की भागीदारी सुनिश्चित हो सकेगी।
- शीर्ष नेतृत्व में महिलाओं की भागीदारी भारत में आंतरिक बदलाव को उत्प्रेरित कर सकता है साथ ही समाज में पितृसत्तात्मकता को कम करने में मददगार साबित होगी।
- एक रिसर्च के अनुसार, लैंगिक समानता किसी राष्ट्र के आर्थिक एवं सामाजिक विकास, लोकतांत्रिक संस्थानों की मजबूती और राष्ट्रीय सुरक्षा की प्रगति के लिये एक महत्त्वपूर्ण शर्त है।
- हालाँकि एफएफपी फ्रेमवर्क को भारतीय संदर्भ के अनुसार अनुकूलित किया जाना चाहिये। यह लिंग आधारित बदलाव के लिये एक प्रारंभिक बिंदु भी हो सकता है जो न केवल विकास बल्कि, सशक्तीकरण और निर्णय लेने के व्यापक दायरे को भी अपने में शामिल करेगा।
- एफएफपी अपनाने से भारत को शांति के लिये अनुकूल माहौल बनाने, महिलाओं के खिलाफ घरेलू बाधाओं/ हिंसा को समाप्त करने और मजबूत द्विपक्षीय संबंधों के निर्माण में भी सहायता प्राप्त होगी।

नोट :

एफएफपी फ्रेमवर्क के तहत भारत द्वारा शुरू की गई नीतिगत पहल

- वर्ष 2007 में भारत ने सार्क, आईबीएसए (IBSA), आईओआरए (IORA) और अन्य बहुपक्षीय मंचों के माध्यम से लैंगिक सशक्तीकरण कार्यक्रमों का समर्थन करने के लिये लीबिया में संयुक्त राष्ट्र मिशन के लिये पहली महिला इकाई तैनात की। समावेशी और सतत् विकास के लिये महिलाओं का नेतृत्व सुनिश्चित करना भारत का लक्ष्य है।
- इसी तरह कई विदेशी कार्यक्रमों की वार्ताओं में भी लैंगिक पक्ष शामिल होता है जैसे- अफगानिस्तान, लेसोथो और कंबोडिया में देखा गया है।
- वर्ष 2015 में भारत ने विदेश मंत्रालय के तहत जेंडर बजट का क्रियान्वयन भी देखा गया।

इस मुद्दे से संबंधित चुनौतियाँ

- महिलाओं की निर्भरता: भारत में महिलाओं की निर्भरता एवं अधीनता के कारण एफएफपी फ्रेमवर्क के प्रभावी रूप से क्रियान्वित होने की संभावना कम हो जाती है।
  - कुछ मायनों में यह भारत में व्यापक खाई को प्रदर्शित करता है जहाँ वर्ष 2019 में महिला मंत्रियों की संख्या 23.1 थी, वहीं 2021 में यह घटकर 9.1 प्रतिशत रह गई है। संसद में महिलाओं की संख्या केवल 14.4 प्रतिशत है।
- पितृसत्ता: पितृसत्तात्मक मूल्य भारतीय समाज के भीतर इतनी गहराई तक सम्मिलित हैं कि घरेलू स्तर पर असमानता की प्रणाली में बदलाव लाने में शायद ही कामयाबी हासिल हो।
  - महिलाओं को पारंपरिक रूप से विदेश नीति के संचालन से बाहर रखा गया है। इसे एक विशिष्ट "महिला दृष्टिकोण" को अपनाकर "सॉफ्ट सिक्योरिटी" जैसे- मानव अधिकार, महिला सशक्तीकरण, प्रवासन और तस्करी के मामलों तक ही सीमित रखा गया, किंतु अधिक महत्वपूर्ण विषय जैसे बाह्य एवं अंतरिक सुरक्षा, विदेश नीति जैसे मामलों में महिलाओं की उपस्थिति गौण रही।

आगे की राह

- निर्णय लेने में महिलाओं की भागीदारी: विदेश नीति, कूटनीति, नौकरशाही, सैन्य एवं निर्णय लेने वाली अन्य शीर्ष संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी के समक्ष आने वाली चुनौतियों को कम करना चाहिये। यह कार्य भारत या तो महिलाओं के लिये कोटा प्रणाली या फिर पुरुषों के समान भागीदारी सुनिश्चित कर पूरा कर सकता है।
- अधिक प्रतिनिधित्व: भारत नीति निर्माण के विभिन्न स्तरों पर महिलाओं को सक्रिय रूप से नियुक्त कर एवं उन्हें सीधे अपने विदेशी संबंधों के संचालन में शामिल करके एफएफपी की ओर कदम बढ़ा सकता है।
  - इसका अर्थ केवल महिलाओं के प्रतिनिधित्व को बढ़ाना नहीं होना चाहिये, बल्कि ऐसे वातावरण का निर्माण करना है जो नई सोच को बढ़ावा दे।
- अंतर्राष्ट्रीय सहयोग: एफएफपी फ्रेमवर्क के उचित कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिये भारत विभिन्न अंतरराष्ट्रीय, क्षेत्रीय और राष्ट्रीय नागरिक समाज संगठनों के साथ सहयोग कर सकता है।

निष्कर्ष

भारतीय संदर्भ में एफएफपी फ्रेमवर्क का निर्माण न केवल हमारी विदेश नीति की प्रक्रिया को नया दृष्टिकोण प्रदान करेगा बल्कि इसे वैश्विक स्तर पर एक उदाहरण की तरह देखा जाएगा कि भारत जैसा एक विकासशील लोकतांत्रिक राष्ट्र जिसकी जड़ों में पितृसत्ता मजबूती से जमी हुई है, किस प्रकार एक एफएफपी फ्रेमवर्क को अपनाने पर विचार कर सकता है।

सार्वभौमिक सामाजिक सुरक्षा

भारत दुनिया के सबसे बड़े कल्याणकारी राज्यों में से एक है फिर भी कोविड-19 के दौरान अपने अधिकांश संवेदनशील नागरिकों को सामाजिक कल्याण प्रदान करने में विफल रहा है। वर्तमान में महामारी के कारण, भारत कई संकटों का सामना कर रहा है। जैसे- एक असफल होता हुआ स्वास्थ्य-ढाँचा, बड़े पैमाने पर अंतर्राज्यीय प्रवास एवं खाद्य असुरक्षा इत्यादि।

नोट :

कोविड-19 महामारी की दूसरी लहर ने मध्यम एवं उच्च आय वर्ग वाले लोगों को भी बुरी तरह से प्रभावित किया है। साथ ही इसने लगभग 75 मिलियन लोगों को गरीबी के दलदल में धकेल दिया है।

महामारी ने हमारी कमज़ोर स्थिति को प्रकट किया है और संदेश दिया है कि हमारे लिये मौजूदा योजनाओं का लाभ उठाने के साथ-साथ देश की आम जनता को सार्वभौमिक सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इससे हमारी आबादी किसी आकस्मिक संकट, जैसे- युद्ध, महामारी इत्यादि, को झेलने में अधिक समर्थ होगी।

सामाजिक सुरक्षा प्रणाली क्या है?

- अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) के अनुसार, सामाजिक सुरक्षा एक व्यापक दृष्टिकोण है जो सामाजिक वंचनाओं को रोकने के लिये विकसित की गई है। यह व्यक्ति को किसी भी प्रकार की अनिश्चितताओं में अपने पर आश्रित लोगों के लिये एक बुनियादी न्यूनतम आय का आश्वासन प्रदान करता है।
- इसके दो तत्त्व हैं:
  - भोजन, कपड़ा, आवास, चिकित्सा देखभाल एवं आवश्यक सामाजिक सेवाओं सहित स्वास्थ्य और बेहतर जीवन स्तर का अधिकार।
  - किसी भी व्यक्ति के नियंत्रण से बाहर की परिस्थितियों, जैसे- बेरोज़गारी, बीमारी, विकलांगता, विधवा अवस्था, वृद्धावस्था या आजीविका के अभाव में आय सुरक्षा का अधिकार।

सार्वभौमिक सामाजिक कल्याण की आवश्यकता क्यों?

- बहुसंख्यक कार्यबल असंगठित क्षेत्र में: भारत में केवल 10% श्रमिक संगठित क्षेत्र से संबंधित हैं बाकी 90% से अधिक श्रमिक असंगठित क्षेत्र से संबंधित हैं। अत: भारत में एक बड़ा कार्यबल नौकरी की सुरक्षा, श्रम अधिकारों और सेवानिवृत्ति के बाद के सुरक्षा प्रावधानों का लाभ नहीं उठा पाता है।
  - इसके अलावा एक गतिशील बाज़ार आधारित अर्थव्यवस्था में तकनीकी परिवर्तनों एवं बढ़ते मशीनीकरण के साथ श्रमिक तेज़ी से अपना रोज़गार खो रहे हैं। इस प्रकार, श्रमिकों को उत्पादक बने रहने के लिये सीखने की क्षमता एवं कार्य की गति को बनाए रखने की आवश्यकता है।
  - हालाँकि, पिछले 15 वर्षों में कौशल विकास पर ध्यान केंद्रित किये जाने के बावजूद परिणाम बहुत उत्साहजनक नहीं हैं।
- बीमारी सार्वभौमिक, लेकिन स्वास्थ्य सेवा नहीं: सामाजिक पूंजी की अनुपस्थिति में आर्थिक पूंजी कमज़ोर वर्ग तक स्वास्थ्य सुविधाओं की पहुँच बनाने में अपर्याप्त साबित हुई है।
  - इसके अलावा स्वास्थ्य सेवा प्राप्त करने के लिये आउट-ऑफ-पॉकेट व्यय (ऋण लेकर क्षमता से अधिक खर्च करना) सीमांत परिवारों को गरीबी में धकेल सकता है। ज्ञातव्य है कि स्वास्थ्य पर निजी व्यय का लगभग 90% आउट-ऑफ-पॉकेट व्यय है।
  - कोविड-19 ने नि:शुल्क सार्वभौमिक स्वास्थ्य देखभाल प्रदान करने की आवश्यकता पर प्रकाश डाला है। यह प्रदर्शित किया है कि निजी स्वास्थ्य संस्थानों में उपचार केवल अमीर एवं समर्थ लोगों द्वारा ही वहन किया जा सकता है।
- सामाजिक सुरक्षा पर अपर्याप्त व्यय: भारत में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों का उद्देश्य व्यापक है, लेकिन सामाजिक सुरक्षा (सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा को छोड़कर) पर समग्र सार्वजनिक व्यय जीडीपी का केवल 1.5% (लगभग) है, जो दुनिया भर में कई मध्यम आय वाले देशों की तुलना में कम है।
  - इसके अलावा, देश में 500 से अधिक प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण योजनाएँ हैं जो केंद्र एवं राज्य के विभिन्न विभागों द्वारा संचालित होती हैं। हालाँकि ये योजनाएँ पूरी तरह से उन लोगों तक नहीं पहुँच पाती है जो ज़रूरतमंद हैं।
  - इसके अलावा, मौजूदा योजनाएँ विभिन्न विभागों के अंतर्गत कई उप-योजनाओं में बंटी हुई हैं। इस कारण आँकड़ों के संग्रहण से लेकर अंतिम व्यक्ति तक सेवा एवं सामाजिक सुरक्षा का वितरण नहीं हो पाता है।
- अपेक्षित लाभ: एक सार्वभौमिक प्रणाली होने से एक डेटाबेस के तहत सभी लाभार्थियों के आँकड़ों को एकत्रित कर सेवाओं के वितरण में आसानी होगी।
  - उदाहरण के लिये प्रधानमंत्री गरीब कल्याण योजना (Pradhan mantri Garib Kalyan Yojna- PMGKY) एक ऐसी योजना है जिसे सार्वभौमिक सामाजिक सुरक्षा में परिणत किया जा सकता है।

नोट :

- इसके अंतर्गत पहले से ही सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS), गैस सिलेंडरों के प्रावधान और मनरेगा (MGNREGS) के लिये मज़दूरों के आँकड़े को समेकित कर लिया गया है।
- एक सार्वभौमिक योजना होने से कोई भी व्यक्ति सेवाओं का लाभ उठाने में पीछे नहीं छूटेगा।
- उदाहरण के लिये, PDS को किसी सार्वभौमिक पहचान पत्र आधार या वोटर कार्ड से जोड़ा जा सकता है, इससे राशन कार्ड ना होने पर भी सेवाओं को ज़रूरतमंद तक पहुँचाया जा सकता है।
- शिक्षा, मातृत्व लाभ, विकलांगता लाभ आदि जैसी अन्य योजनाओं/कल्याणकारी प्रावधानों को भी सार्वभौमिक बनाने से लोगों के लिये बेहतर जीवन स्तर सुनिश्चित होगा।

केस स्टडी: सार्वभौमिक सामाजिक कल्याणकारी मॉडल

- ऐसी सामाजिक सुरक्षा योजना का एक उदाहरण आयरलैंड में गरीबों हेतु कानून प्रणाली (Poor Law System) है।
- 19 वीं शताब्दी में आयरलैंड, एक देश जो गरीबी और अकाल से घिरा हुआ था, ने स्थानीय संपत्ति करों की सहायता से गरीबों को वित्तीय राहत प्रदान करने के लिये गरीब कानून प्रणाली की शुरुआत की।
- ये कानून न केवल समय पर सहायता प्रदान करने बल्कि ऐसा करते समय गरीबों की गरिमा और सम्मान को बनाए रखने के लिये भी थे।
- आज आयरलैंड में सामाजिक कल्याण प्रणाली चार स्तरों के एक तंत्र के रूप में विकसित हो चुकी है, जिसमें सामाजिक बीमा, सामाजिक सहायता, सार्वभौमिक योजनाएँ और अतिरिक्त लाभ शामिल हैं।

आगे की राह

- पल्स पोलियो यूनिवर्सल टीकाकरण प्रोग्राम का अनुकरण करना: भारत ने पल्स पोलियो यूनिवर्सल टीकाकरण के रूप में एक सार्वभौमिक स्वास्थ्य सेवा कार्यक्रम को सफलतापूर्वक चलाया। इसके अंतर्गत कई वर्षों तक एक समर्पित प्रयास किया गया। परिणामस्वरूप वर्ष 2014 में भारत को पोलियो मुक्त घोषित किया गया।
  - ज्ञान और प्रौद्योगिकी में प्रगति के साथ सामाजिक कल्याण हेतु सार्वभौमिक कवरेज आवश्यक है।
  - इसके कार्यान्वयन को सरकारी विभागों में आँकड़ों का डिजिटलीकरण, आँकड़ों पर आधारित निर्णय लेने और सहयोग पर ध्यान केंद्रित करने के माध्यम से आसानी से किया जा सकता है।
- मौजूदा प्रणालियों की सहायता से नई प्रणाली का निर्माण: प्रधानमंत्री गरीब कल्याण योजना (PMGKY) एक ऐसी योजना है जिसे सार्वभौमिक सामाजिक सुरक्षा हेतु तैयार किया जा सकता है।
- मनरेगा का शहरों में कार्यान्वयन: मनरेगा ने उन लाखों श्रमिकों को रोज़गार प्रदान करके इसकी उपयोगिता साबित की है, जो पुन: अपने स्थायी निवास स्थानों पर वापस आए जहाँ से वो निर्वासित हुए थे।
  - इस प्रकार, इस कार्यक्रम को शहरी क्षेत्रों में विस्तारित करने पर ध्यान देना चाहिये। नगरपालिका के पास कई ऐसे कार्य होते हैं जिन्हें करना आवश्यक होता है। जैसे- स्वच्छता में सुधार, मामूली मरम्मत कार्य, जिसमें वे मानव श्रम का उपयोग कर सकते हैं।
- सार्वभौमिक स्वास्थ्य कवरेज प्रदान करना: प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना (PM-JAY) के प्रबंधन के लिये शासन के सभी स्तरों पर आयुष्मान भारत-राष्ट्रीय स्वास्थ्य एजेंसी स्थापित करने की आवश्यकता है।
- इसके अलावा, जन औषधि भंडार से जुड़ी चुनौतियों की समीक्षा और उनके समाधान की ज़रूरत है ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि वे आत्मनिर्भर संस्थाओं के रूप में कार्य करें और पूरे देश में इनकी संख्या में तेज़ी से बढ़ोतरी हो सके।

निष्कर्ष

कोविड-19 से प्राप्त अनुभव दर्शाता है कि सरकारों को उनकी परिस्थितियों, जनसांख्यिकीय विशेषताओं और जोखिम के अनुसार स्वास्थ्य मॉडल अपनाने की आवश्यकता है न कि वन साईज फिट ऑल पर निर्भर रहने की।

नोट :